• सिर्फ कागजों में ही कुपोषण से जंग • मप्र में कैसे होगा बाघों का संरक्षण?

In Pursuit of Truth

पाक्षिक

अक्स

www.akshnews.com

परिवहन विभाग ने मारी बाजी

वर्ष 19, अंक-2 | 16 से 31 अक्टूबर 2020 | पृष्ठ-48 | मूल्य 25 रूपये

R.N.I. NO.HIN/2002/8718 M.P. BPL/642/2018-20

अस्तित्व का महासंग्राम

Anu Sales Corporation
We Deal in
Pathology & Medical
Equipments
Add: Ground Floor, 17/1, Shanti Niketan, Near Chetak Bridge, Bhopal-462023
M. : 9329556524, 9329556530, E-mail : ascbhopal@gmail.com

इस अंक में

राजपथ

10–11 | दलित-किसान किंगमेकर...!

मप्र में 28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव में सरकार का भविष्य दांव पर है। भाजपा और कांग्रेस अपनी-अपनी जीत के दावे कर रही है। लेकिन मतदाता अभी भी मौन हैं। ऐसे में दोनों पार्टियां मतदाताओं को रिझाने...

लालफीताशाही

12 | जांच को आंच नहीं

मप्र वाकई अजब है, गजब है। यहां कब क्या हो जाए कुछ नहीं कहा जा सकता। अब उद्यानिकी विभाग में यंत्रीकरण योजना में किसानों से करीब 100 करोड़ की ठगी का मामला ही ले लें। घोटाले की प्राथमिक जांच में आईएएस...

विवाद

14–15 | बड़ी देर कर दी मेहरबां...

मप्र में राजघरानों से जुड़ी ऐतिहासिक धरोहरों को संभाल रहे ट्रस्टों की भूमिका पर सवाल उठने लगे हैं। कई राजघरानों की संपत्ति की देखरेख का जिम्मा लंबे समय से ट्रस्ट संभाल रहे हैं। यह चौंकाने वाली बात है कि ट्रस्ट के कर्ता-धर्ता पिछले दरवाजे से...

विसंगति

16 | किसान पर दोहरी मार

देश को 60 फीसदी सोयाबीन उत्पादन देने वाले मप्र में इस बार नकली बीज और मौसम की मार से पीले सोने की पैदावार 65 फीसदी गिरी है। इससे प्रदेश के किसानों को करोड़ों रुपए की चपत लगी है। कृषि विशेषज्ञों के अनुसार, सोयाबीन की फसल को सबसे अधिक नकली बीजों...

आवरण कथा 24, 25, 26, 27, 28

मप्र में 28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव को भाजपा और कांग्रेस के अस्तित्व का चुनाव कहा जा रहा है। शायद यही वजह है कि इस चुनाव में राजनीतिक पार्टियों के नेताओं ने मर्यादा की सारी हदें पार कर ली हैं। जैसे-जैसे हम विकसित और प्रगतिशील होते जा हैं, वैसे-वैसे ही शब्दों की मर्यादाएं भंग होती जा रही हैं। आए दिन राजनीति में इस तरह की भाषा सुनने को मिलती है जो कहीं ना कहीं यह बताती है कि अब राजनीति में मर्यादा न केवल तार-तार हो रही है बल्कि विपक्षी पर इल्जाम लगाने...

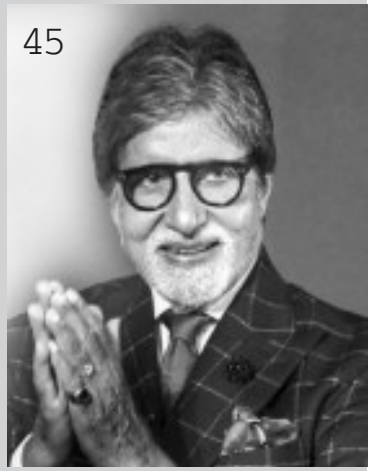

राजनीति

30–31 | डराते राज्यपाल

राज्यपाल को राज्य का संरक्षक माना जाता है। लेकिन पिछले एक दशक में यह देखने को मिल रहा है कि राज्यपाल केंद्र सरकार की कठपुतली बनकर काम कर रहे हैं। इस साल महाराष्ट्र और पश्चिम बंगाल के राज्यपाल अपनी कार्यप्रणाली के कारण विवादों में रहे हैं।

राजस्थान

35 | जीत के बाद भी चुप्पी

राजस्थान में पंचायत चुनाव के सभी चरण पूरे हो चुके हैं। पहले और दूसरे दौर में इन चुनावों में कांग्रेस या भाजपा में से किस पार्टी का दबदबा रहा यह कहना बेहद मुश्किल है, क्योंकि ये चुनाव पार्टी सिंबल पर नहीं होते हैं। लिहाजा दोनों पार्टियां अपनी-अपनी जीत के दावे जरूर करती रहती...

उत्तरप्रदेश

37 | प्रियंका बनी असली विपक्ष

उत्तर प्रदेश में बाजी पलट रही है! प्रियंका गांधी ने साबित कर दिया है कि राज्य में असली विपक्ष वही हैं। कांग्रेस के कार्यकर्ता जिस बूस्टर डोज का इंतजार कर रहे थे वह उन्हें मिल गया है। हाथरस जाते समय पुलिस की लाठियों के सामने जिस तरह प्रियंका...

6-7 अंदर की बात
40 विदेश
41 महिला जगत
43 कहानी
44 खेल
45 फिल्म
46 व्यंग्य

अपनी बात

बदतमीजी का सही इलाज जरूरी...

नूर नाहवी का एक शेर है...

बरसों रहे हैं आप हमारी निगाह में
ये क्या कहा कि हम तुम्हें पहचानते नहीं...

कुछ ऐसी ही स्थिति अभिनेत्री कंगना रनौत की हो गई है। अभी तक वे फिल्मी हस्तियों, कुछ राजनीतिक पार्टियों और उनके नेताओं के साथ बदतमीजी कर रही थीं, लेकिन अब वे इतनी नकचढ़ी हो गई हैं कि उन्होंने अन्नदाताओं का भी अपमान कर डाला। जिन अन्नदाताओं के खून और पसीने से उपजाए गए अनाज से आज वे पोषित हैं, उन्हीं को आतंकवादी कह डाला है। अभी तक उनके साथ देश की सहानुभूति थी, लेकिन उन्होंने किसानों के साथ बदतमीजी करके अपने पैर पर ही कुल्हाड़ी मार ली है। यह तो हम सभी जानते हैं कि पर्दे पर हो या पर्दे के बाहर कंगना का नाम अक्सर विवादों से जुड़ता रहा है। लेकिन वे इस कदर अहसान फरामोश हो जाएंगी, किसी को रत्तीभर भी उम्मीद नहीं थी। दरअसल, कंगना की महत्वाकांक्षा दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। देखने में यह आ रहा है कि केंद्र सरकार के खिलाफ जो भी आवाज उठाता है, वे उसके खिलाफ हो जाती हैं। लेकिन अब लगता है ऊंट पहाड़ के नीचे आ गया है। उन्होंने कृषि कानून का विरोध करने वाले किसानों को आतंकवादी कहकर मुसीबत मोल ले ली है। क्योंकि उनके खिलाफ कर्नाटक के तुमकुर जिले की एक अदालत के आदेश के बाद पुलिस ने एफआईआर दर्ज कर ली है। दरअसल, कृषि कानून संसद में पास होने के बाद 21 सितंबर को कंगना ने ट्विटर हैंडल पर लिखा था कि जिन लोगों ने सीएए पर गलत जानकारी और अफवाहें फैलाईं, जिसकी वजह से हिंसा हुई वही लोग अब किसान विरोधी बिल पर पर गलत जानकारी फैला रहे हैं, जिससे राष्ट्र में डर है। वे आतंकी हैं। सिने अदाकारा कंगना रनौत ने जब मुंबई को पीओके कहा, महाराष्ट्र को पाकिस्तान कहा, महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री जैसे गरिमामयी ओहदे पर बैठे उद्धव ठाकरे से तू-तड़ाक की तो लोगों को समझ आ गया था कि वो किसकी शह पर ऐसी भाषा बोल रही हैं। राजनीति और जीवन का तजुर्बा रखने वालों ने उनकी बातों को फिजूल समझकर उन पर ध्यान देना छोड़ दिया था। लेकिन अब तो इस अदाकारा ने हद ही पार कर दी है। आप किसी विशेष विचारधारा से प्रभावित हो सकते हैं, उस विचारधारा की सरपरस्ती करने वाली पार्टी की सरकार से वाई श्रेणी की सुरक्षा मिलने का अहसान तमाम नफरती बयानों के जरिए चुका सकते हैं, लेकिन आप अन्नदाता किसानों का अपमान कतई नहीं कर सकते। कंगना रनौत ने बदजुबानी की सरहदों को लांघते हुए अब ऐसा बयान दिया है, जिसे लेकर उनकी सोच पर सिर्फ अफसोस जाहिर किया जा सकता है। कोई भी भारतीय शख्स किसी भी पार्टी से जुड़ा हो, वह इस बयान को बर्दाश्त नहीं कर सकता कि किसान को आतंकी कह दिया जाए। बता दें कि कृषि विधेयकों को लेकर पंजाब और हरियाणा में किसान तपती सड़कों पर धरने पर बैठे हुए हैं। इन विधेयकों को काला कानून बताते हुए उन्होंने इन्हें वापस लेने की मांग की है और सरकार इन्हें उनके फायदे वाला कानून बता रही है। लेकिन कंगना की बदजुबानी तो उस किसान के हौसले को तोड़ने वाली है, जो सर्दी-गर्मी, धूप-बरसात को दरकिनाकर कर अन्न उपजाने के काम में जुटा रहता है। कंगना की इस बदतमीजी का सही इलाज जरूरी है, वरना वे सीमा पर तैनात जवानों के लिए भी ऐसे शब्द बोल सकती हैं, जिससे उनका मनोबल गिर सकता है।

-राजेन्द्र आगाल

पाक्षिक अक्स

वर्ष 19, अंक 2, पृष्ठ-48, 16 से 31 अक्टूबर, 2020

प्रकाशक एवं संपादक : राजेन्द्र आगाल

सम्पादकीय कार्यालय :
प्लाट नम्बर 150, जोन-1 मनोरमा कॉम्पलेक्स,
एफ-03, 04, प्रथम तल, एम.पी. नगर
भोपाल- 462011 (म.प्र.),
फोन नं. 0755-2557777, टेलीफेक्स - 0755-4017788
email : akshmagazine@gmail.com
Website : www.akshnews.com
RNI NO. HIN/2002/8718 MPBPL/642/2018-20

ब्यूरो
मुंबई :- ऋतेन्द्र माथुर, **कोलकाता:-** इंद्रकुमार, **जयपुर:-** आर.के. बिन्नानी, **छत्तीसगढ़:-** संजय शुक्ला, मार्केण्डेय तिवारी, टी.पी. सिंह, **लखनऊ :-** मधु आलोक निगम।

प्रदेश संवाददाता
094251 25096 (इंदौर) विकास दुबे
098276 18400 (जबलपुर) धर्मेन्द्र कथूरिया
094259 85070, (उज्जैन) श्यामसिंह सिकरवार
094259 85070, (मंदसौर) धर्मवीर रत्नावत
098934 77156, (विदिशा) ज्योत्सना अनूप यादव

क्षेत्रीय कार्यालय
नई दिल्ली : ईसी 294 माया इंक्लेव मायापुरी-
फोन : 011 25495021, 011 25494676
मुंबई : बी-1, 41 शिव पावर्ती चेम्बर प्लाट नंबर 106-110 सेक्टर-21
नेरूल, नवी मुंबई-400706 मो.-093211 54411
कोलकाता : 70/2 हजरा रोड कोलकाता
फोन-033 24763787, मोबाइल: 09331 033446
जयपुर : सी-37, शांतिपथ, श्याम नगर (राजस्थान)
फोन- 0141 2295805, मोबाइल-09829 010331
रायपुर : एमआईजी 1 सेक्टर-3 शंकर नगर, फोन : 0771 2282517
भिलाई : नेहरू भवन के सामने, सुपेला, रामनगर, भिलाई,
मोबाइल 094241 08015
इंदौर : 39 श्रुत्रि सिलटर निपानिया, इंदौर
मोबाइल - 094251 25096

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक व प्रकाशक, राजेन्द्र आगाल द्वारा आगाल प्रिंटर्स, प्लाट नं. 150, जोन-1, प्रथम तल, एफ-03, मनोरमा काम्पलेक्स, एम.पी. नगर भोपाल 462011 (म.प्र.), से मुद्रित एवं प्रकाशित

इस अंक में प्रकाशित सामग्री लेखकों के अपने विचार हैं इनसे सम्पादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं हैं समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल होगा।

मेट्रोपोलिटन कब तक?

मेट्रो रेल प्रोजेक्ट को अमल में लाने के लिए इंदौर और भोपाल को मेट्रोपोलिटन एरिया घोषित करना जरूरी है। पूर्व की कांग्रेस सरकार ने 2 हजार वर्ग किलोमीटर के लिए इंदौर मेट्रोपोलिटन अथॉरिटी बनाने की घोषणा की थी, मगर निर्णय पर अमल करने से पहले ही सरकार धराशायी हो गई।

● **आयुषी राजपूत,** ग्वालियर (म.प्र.)

सोयाबीन की फसल खराब

अनाज के रिकार्ड उत्पादन में पांच बार कृषि कर्मण अवार्ड पा चुके मप्र में इस बार पीले सोने यानी सोयाबीन की फसल पर मौसम की मार पड़ी है। प्रदेश में इस बार अनुकूल मौसम को देखते हुए किसानों ने रिकार्ड सोयाबीन की बोवनी की थी, लेकिन इस बार फिर उन्हें नुकसान झेलना पड़ा है।

● **जितेंद्र सोनी,** इंदौर (म.प्र.)

किसानों को लुभा रहे नेता

प्रदेश में उपचुनाव होने हैं। किसान कर्जमाफी, किसान सम्मान निधि से लेकर सियासी दल हर आयोजन में किसान और किसान से जुड़े मुद्दों पर बयान देकर किसान वोटर को साधने की कोशिश में लगे हैं। लेकिन अब किसानों से जुड़ी योजनाओं को लेकर सियासी संग्राम उठ खड़ा हुआ है।

● **लाखन सिंह,** भोपाल (म.प्र.)

बुंदेलखंड कब होगा सुरक्षित

बुंदेलखंड आर्थिक रूप से कमजोर लोगों का क्षेत्र है। इस कारण यहां देशभर के बड़े-बड़े कारोबारी खनन का कारोबार करने आते हैं। इसका असर यह देखने को मिल रहा है कि बुंदेलखंड क्षेत्र के सभी 13 जिलों में हर जगह क्रेशर मशीन चलती दिख जाएगी। पर्यावरण के निर्देशों को दरकिनार कर चल रहे क्रेशर बुंदेलखंड को बीमार कर रहे हैं। आज तीन सौ से भी ज्यादा क्रेशर यहां चल रहे हैं। रात-दिन चल रहे क्रेशर आसपास के पहाड़ों को खत्म कर रहे हैं। कबरई के मोचीपुरा और विशाल नगर के पास पहाड़ की चोटी से शुरू हुई खुदाई अब पहाड़ के कई सौ फीट नीचे गहराई तक पहुंच गई है। पानी निकल आया है। इसे पाताल तोड़ खुदाई कहते हैं। सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए।

● **राकेश मीणा,** सीहोर (म.प्र.)

जंगलीपन रोके सरकार

प्रदेश का कोई भी ऐसा जिला नहीं है जहां वनों की अवैध कटाई न हो रही हो। देश के सबसे बड़े वन क्षेत्र वाले मप्र में भी जंगलों को काटा जा रहा है। वनाधिकार अधिनियम के तहत मिलने वाले भू अधिकार पत्र (पट्टे) के लिए अतिक्रमणकारी लगातार पेड़ों की कटाई कर वन भूमि पर कब्जा कर रहे हैं। सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए और जंगलों में हो रहे इस जंगलीपन को रोकना चाहिए। ताकि आने वाले समय में पर्यावरण सुरक्षित हो सके।

● **सपना सिंह,** जबलपुर (म.प्र.)

कांग्रेस धीरे-धीरे लौट रही है

जिस तरह से प्रियंका गांधी उप्र में अपनी पार्टी को लगातार समय दे रही हैं, वह पार्टी के संगठनात्मक नजरिए से बेहद अच्छा है और उसको देखकर लगता है कि अब कांग्रेस पार्टी के शीर्ष नेतृत्व को भी यह समझ आ गया है, कि भविष्य में कांग्रेस की केंद्र में सरकार बनाने का रास्ता उप्र की धरती से ही निकलेगा। पिछले बहुत लंबे समय से कांग्रेस हाईकमान के उपेक्षित व्यवहार के चलते उप्र में कांग्रेस पार्टी एकदम सुसुप्त अवस्था में चली गई थी। जिसको खड़ी करने के लिए अब प्रियंका गांधी दिन-रात मेहनत कर रही हैं।

● **संदीप पटेल,** नई दिल्ली

पाठकों से निवेदन

कृपया अपनी प्रतिक्रियाएं पक्ष या विपक्ष जो भी संभव हो इस पते पर भेजें

अक्स

150 जोन-1, मनोरमा काम्पलेक्स,
एफ-02, 03, एमपी नगर, भोपाल

10 जनपद का नया जासूस

कांग्रेस के भीतर भारी उथल-पुथल का दौर जारी है। इस उथल-पुथल के बीच सोनिया गांधी संगठन में बड़े पैमाने पर फेरबदल करने की तैयारी कर रही हैं। सूत्रों का कहना है कि उन्होंने एक-एक नेता की कुंडली तैयार करने के लिए अपने नए जासूस को सक्रिय कर दिया है। खबर यह भी है कि कई प्रदेशों के अध्यक्ष बदले जाएंगे और 23 कथित बागी नेताओं के करीबी प्रदेश के नेताओं को भी ठिकाने लगाया जाएगा। इस सबके बीच इन 23 नेताओं में शामिल रहे मुकुल वासनिक पर कांग्रेस अध्यक्ष की मेहरबानी को लेकर तरह-तरह के कयासों का दौर चल रहा है। वासनिक 23 नेताओं में शामिल हैं जिनकी सोनिया को लिखी चिट्ठी ने भारी हंगामा पैदा किया। लेकिन इन नेताओं का कद एक तरफ कम किया गया तो दूसरी तरफ वासनिक का कद बढ़ाया गया। उन्हें सोनिया गांधी की अनुपस्थिति में पार्टी के लिए निर्णय लेने वाली 6 सदस्यीय समिति में शामिल किया गया है जिसमें पांच बाकी सदस्य सोनिया के खासे करीबी माने जाते हैं। इतना ही नहीं वासनिक को कांग्रेस कार्य समिति का सदस्य और मप्र कांग्रेस का प्रभारी महामंत्री भी बना दिया गया है। जानकारों की मानें तो अब बाकी बचे 22 नेताओं को लगने लगा है कि वासनिक उनके खेमे में सोनिया के जासूस थे।

कहीं जीरो तो कहीं हीरो

चुनाव विशेषज्ञ कहलाए जाने वाले प्रशांत किशोर इन दिनों पश्चिम बंगाल में खासे सक्रिय बताए जा रहे हैं। अपने गृह राज्य बिहार में स्वयं सक्रिय राजनीति में उतरने का इशारा कर प्रशांत किशोर उर्फ पीके ने राज्य के नेताओं की नींद उड़ा डाली थी। लेकिन अब लगता है कि उनका उत्साह फीका पड़ गया है। बिहार विधानसभा के चुनाव घोषित हो चुके हैं। राज्य में राजनीतिक सरगर्मियां चरम पर हैं लेकिन पीके इस परिदृश्य से कोसों दूर पश्चिम बंगाल में बैठे तृणमूल कांग्रेस के लिए रणनीति तैयार करने में जुटे हैं। खबर है कि ममता बनर्जी के कई करीबी पीके की कार्यशैली से खासे नाराज हैं। इन नेताओं का मानना है कि पीके पार्टी के लिए रणनीति बनाने के **बजाय टिकट** बांटने के काम में जुटे हैं। दरअसल, टीम द्वारा पीके तृणमूल नेताओं और कार्यकर्ताओं के बीच संदेश दिया जा रहा है कि पार्टी के टिकट वितरण में उनकी सक्रिय भूमिका रहेगी। इतना ही नहीं पीके की सलाह पर ममता बनर्जी ने सभी बड़े नेताओं के सोशल मीडिया एकाउंट्स टीम पीके के हवाले कर दिए हैं। तृणमूल नेताओं को भारी नाराजगी इसके चलते भी है कि टीम पीके अशालीन भाषा का इस्तेमाल उनके ट्विटर एकाउंट आदि पर कर रही है। जानकारों का दावा है कि त्रिवेदी समेत ममता के कई पुराने साथी पीके और उनकी टीम से खिन्न हो पार्टी छोड़ने तक पर विचार कर रहे हैं।

अंबानी, अडानी निशाने पर

देश में पहले भी कई सरकारों पर क्रोनी कैपिटलिज्म को बढ़ावा देने के आरोप लगते रहे हैं। राज्य सरकारों पर आरोप लगे हैं कि उसने अपने क्रोनी पैदा किए और उनका कारोबार आगे बढ़वाया, पर हमेशा सरकारें या पार्टियां ही लोगों के निशाने पर रहीं। सरकारों की मदद से आगे बढ़ने वाले यानी क्रोनी कारोबारी आम लोगों के निशाने पर नहीं आए। उनके प्रति लोगों में नाराजगी नहीं होती थी। उप्र में कई सरकारों ने एक शराब कारोबारी को आगे बढ़ाया पर किसी ने उस कारोबारी का विरोध नहीं किया। यह पहली बार हो रहा है कि आम आदमी केंद्र सरकार के पसंदीदा कारोबारियों को निशाना बना रहा है। फिलहाल यह परिघटना सिर्फ पंजाब में देखने को मिल रही है पर जल्दी ही हरियाणा में भी ऐसा होगा और फिर देश के दूसरे हिस्सों में भी इसकी लहर पहुंचेगी। तीन कृषि कानूनों का विरोध कर रहे पंजाब के किसान रिलायंस और अडानी समूह का भी विरोध कर रहे हैं। पंजाब के किसानों का कहना है कि अंबानी और अडानी राज्य की कृषि को कंट्रोल करना चाहते हैं। किसानों की इस बात से यह जाहिर हो रहा है कि वे कृषि कानूनों की बारीकियों को समझ रहे हैं और उसके असर का सही आंकलन कर रहे हैं।

महिला नेताओं की राजनीति

कांग्रेस पार्टी की नेता और राष्ट्रीय प्रवक्ता खुशबू सुंदर ने इस्तीफा दे दिया है। उन्होंने कांग्रेस से इस्तीफा देने के तुरंत बाद भाजपा ज्वाइन कर ली और कहा कि कांग्रेस में अनेक बड़े नेता हैं, जिनको जमीनी हकीकत नहीं पता है। तमिल और हिंदी फिल्मों की अभिनेत्री खुशबू का यह भी कहना है कि कांग्रेस में महिला नेताओं को आगे बढ़ने से रोका जाता है। अभी थोड़े दिन पहले हिंदी फिल्मों की अभिनेत्री उर्मिला मातोंडकर भी कांग्रेस से अलग हो गईं। उनसे पहले कांग्रेस की राष्ट्रीय प्रवक्ता प्रियंका चतुर्वेदी ने पार्टी छोड़ी थी। वे शिवसेना में शामिल हो गई थीं और शिवसेना ने उनको राज्यसभा सदस्य बना दिया है। खुशबू सुंदर भी प्रियंका चतुर्वेदी जैसा कुछ हासिल होने की उम्मीद कर रही हैं। हालांकि यह इतना आसान नहीं लग रहा है। कांग्रेस के कई नेता मान रहे हैं कि तमिलनाडु में डीएमके-कांग्रेस एलायंस की सरकार बनने वाली है और उससे ठीक पहले खुशबू ने कांग्रेस छोड़ दी। अगर वे कांग्रेस के साथ रहतीं तो उन्हें कुछ फायदा हो सकता था।

मेघालय वाली कहानी

मेघालय में कांग्रेस छोड़कर भाजपा के साथ जुड़े और एनपीपी-भाजपा सरकार को समर्थन देने वाले आधा दर्जन से ज्यादा कांग्रेस विधायक पाला बदलना चाहते हैं। उनके मामले अदालत में हैं और अदालत से बाहर भी पिछले दिनों उन्होंने प्रयास किया था कि राज्य की सरकार गिराई जाए पर ऐसा नहीं हो सका। कांग्रेस छोड़कर भाजपा में शामिल हुए कुछ नेता यही कहानी त्रिपुरा में दोहराना चाहते हैं। तीन साल पहले कांग्रेस छोड़कर भाजपा में शामिल हुए भाजपा विधायक सुदीप रॉय बर्मन ने मुख्यमंत्री बिप्लब देब के खिलाफ मोर्चा खोला है। बर्मन सात विधायकों के साथ दिल्ली में डेरा डाले हुए हैं और उनका दावा है कि उनके साथ दो विधायक और हैं, जो कोरोना की वजह से दिल्ली नहीं आ सके। इसका मतलब है कि भाजपा के 36 में से एक चौथाई विधायकों के समर्थन से वे मुख्यमंत्री बदलने की मांग कर रहे हैं। कांग्रेस के ही एक और पुराने नेता व भाजपा विधायक सुशांत चौधरी भी इस अभियान में शामिल हैं।

बुढ़ापे में सुख-चैन पर ग्रहण

मप्र की प्रशासनिक वीथिका में इस समय नौकरशाही असमंजस के दौर से गुजर रही है। किसी को किसी पर भरोसा नहीं है। वे एक-दूसरे को शक की निगाह से देख रहे हैं। हैरानी की बात तो यह है कि वर्तमान के साथ ही पूर्व नौकरशाह भी सशंकित हैं। हद तो यह देखने को मिल रही है कि मुख्य सचिव रहे कुछ नौकरशाहों के बुढ़ापे का सुख-चैन भी खतरे में पड़ा दिख रहा है। दरअसल, इसकी वजह है खासगी ट्रस्ट में सामने आया भ्रष्टाचार। प्रदेश की व्यावसायिक राजधानी सहित देशभर में होलकर राजघराने की जितनी संपत्तियां थीं उन्हें उसकी देखरेख करने वाले खासगी ट्रस्ट के कर्ताधर्ताओं ने मनमाने तरीके से बेच दिया है। सूत्र बताते हैं कि इस महाघोटाले में कई नौकरशाह बलि का बकरा बनाए जाएंगे। प्रशासनिक मुखिया इसकी तैयारी कर रहे हैं। इसमें एक पूर्व मुख्य सचिव भी निशाने पर है। गौरतलब है कि वर्तमान प्रशासनिक मुखिया ने दो पूर्व मुख्य सचिवों को चलता कर दिया है। जबकि संभावना जताई जा रही थी कि शासन के मुखिया के करीबी रहे इन दोनों साहबों की संविदा वाली सेवाएं आगे भी जारी रहेंगी। लेकिन प्रशासनिक मुखिया के आगे शायद किसी की नहीं चल पाई। बताया जाता है कि अब एक और पूर्व मुख्य सचिव साहब के निशाने पर है। शायद इन्हें खासगी ट्रस्ट के घपले की बलिबेदी पर चढ़ाकर चलता कर दिया जाए। अगर ऐसा होता है तो इनके भी बुढ़ापे के सुख-चैन पर ग्रहण लग सकता है।

मप्र से मोह भंग क्यों?

प्रदेश की प्रशासनिक वीथिका में इन दिनों आईपीएस दंपत्ति की चर्चा जोरों पर है। इसकी वजह यह है कि मप्र में वर्षों तक सेवाएं देने के बाद अब इन्होंने यहां से रवानगी डाल दी है। ये दंपत्ति 2006 बैच के आईपीएस अधिकारी हैं। दोनों ने स्वेच्छा से व्यक्तिगत कारणों से छत्तीसगढ़ संवर्ग में सेवाएं सौंपे जाने के लिए राज्य सरकार को आवेदन किया था। दोनों उप पुलिस महानिरीक्षक के पद पर पदस्थ थे। फिर ऐसा क्या हुआ कि इनका मप्र से मोह भंग हो गया और छत्तीसगढ़ भा गया। सूत्रों का कहना है कि इस दंपत्ति की एक समय प्रदेशभर में तूती बोलती थी। ये जो चाहते थे, वह काम करा लेते थे। लेकिन पिछले कुछ साल से ये अपने को उपेक्षित महसूस कर रहे थे। जब इस संदर्भ में पड़ताल की गई तो ये बात सामने आई कि प्रदेश भाजपा में पावरफुल रहे एक नेताजी का इन पर वरदहस्त था। जब तक वे नेताजी प्रदेश भाजपा संगठन में रहे तब तक इस दंपत्ति की तूती बोलती थी। जब उक्त नेताजी राज्यपाल की भूमिका में थे, तब भी उन्होंने इनको संरक्षण दे रखा था। ऐसे में इनको पावरफुल रहने की लत सी लग गई। लेकिन अब नेताजी खुद हाशिए पर चले गए हैं। ऐसे में इस दंपत्ति की पूछपरख कम हो गई है। इसलिए इस दंपत्ति ने मप्र से प्रतिनियुक्ति पर छत्तीसगढ़ जाना ही उचित समझा। लेकिन मप्र की प्रशासनिक वीथिका में चर्चा जोरों पर है कि आखिर इन्होंने छत्तीसगढ़ में ऐसा क्या देखा है, जिससे वहां जाने का निर्णय लिया है।

चोरी में कमीशनखोरी

चोर-चोर मौसेरे भाई वाली कहावत तो आपने सुनी ही होगी। यह कहावत इन दिनों प्रदेश के खनिज विभाग में चरितार्थ हो रही है। दरअसल, इस विभाग में चोरी और कमीशनखोरी इस कदर है कि जो भी यहां आता है, उसे उस रंग में रंगना पड़ता है या रंग दिया जाता है। अब विभागीय मंत्री को ही ले लिया जाए। मंत्रीजी अपने सीधेपन के लिए जाने जाते हैं। लेकिन उनको विभाग की कमान जैसे ही मिली उनको अधिकारियों ने पथरीली जमीन से लक्ष्मी निकालने का फंडा पूरी तरह समझा दिया। यही नहीं, मंत्रीजी के विशेष सहायक ने मंत्रीजी को इस मामले में भरपूर सहयोग किया है। उन्होंने विभागीय अधिकारियों के साथ मिलकर मंत्रीजी को बता दिया है कि यह ऐसा विभाग है जहां हींग लगे न फिटकरी और रंग चोखा हो जाता है। शातिर बुद्धि विशेष सहायक ने भोले-भाले मंत्रीजी को अधिकारियों के साथ मिलकर लक्ष्मी बटोरने के काम में लगा दिया है। लेकिन मंत्रीजी की पीठ के पीछे उनके नाम पर विभाग में कई ऐसे काम हो रहे हैं जो मंत्रीजी के साथ ही सरकार की साख पर भी दाग लगा रहे हैं। ऐसा ही एक मामला सामने आया तो मंत्रीजी आपा खो बैठे। दरअसल, विभाग के एक एग्जुकेटिव डायरेक्टर को उपचुनाव के लिए चंदा जुटाने का काम दिया गया था, लेकिन उन्होंने उसमें अपना भी कमीशन जोड़कर वसूली शुरू कर दी। जब ये बात मंत्रीजी को पता चली तो उन्होंने उक्त अफसर को हाशिए पर डाल दिया।

जनता गई भाड़ में

मप्र के इतिहास में कोविड-19 ने जनमानस का जितना नुकसान किया है, उतना शायद ही कभी हुआ होगा। कोरोना वायरस की मार पड़ने पर सरकार ने जनता के लिए पलक पावड़े बिछा दिए थे। शासन और प्रशासन के मुखिया हर पल जनता की फिक्र में लगे रहते थे। खासकर शासन के मुखिया तो रात-दिन जनता के नाम संदेश देते रहते थे। लेकिन अब स्थिति बदली-बदली नजर आ रही है। शासन के मुखिया जनता को भूल ही गए हैं। जहां एक तरफ कोविड-19 की गाइडलाइन के पालन के नाम पर जनता के खिलाफ चालानी कार्रवाई हो रही है, वहीं अस्पतालों में भी इलाज में बेमानी हो रही है। राजधानी भोपाल से लेकर प्रदेशभर में अनहोनी सामने आ रही है। लेकिन उस पर कोई ध्यान नहीं दे रहा है। इसके इतर शासन के मुखिया प्रशासनिक अधिकारियों के स्वास्थ्य के लिए अधिक फिक्रमंद दिख रहे हैं। पिछले दिनों उन्होंने प्रशासनिक मुखिया से यह जानकारी भी ली कि कौन-कौन कोविड-19 का शिकार हुआ है और कौन-कौन अस्पताल से घर आ चुका है। वहीं जनता की चिंता अब किसी को नहीं है।

शराब बदनाम क्यों?

महाकाल की नगरी में जहरीला पेय पदार्थ पीने के बाद एक दर्जन से अधिक लोगों की मौत के बाद प्रदेशभर में हल्ला मचाया जा रहा है कि जहरीली शराब पीने से ये मौतें हुई हैं। इससे शराब बनाने वाली कंपनियों और विक्रेताओं के साथ ही सरकार भी असमंजस में पड़ी हुई है। इसकी वजह यह है कि वैध तरीके से बनी शराब कभी जहरीली नहीं होती है। लेकिन देखा गया है कि जब भी नकली और मिलावटी तरीके से बने नशीले पेय पदार्थ को पीकर कोई हताहत होता है तो उसे जहरीली शराब का नाम दे दिया जाता है। महाकाल की नगरी में भी लोगों ने जहरीला पेय पदार्थ पिया था, जिसके कारण उनकी मौत हुई है। दरअसल, उज्जैन ही नहीं बल्कि देशभर में नशे के आदी लोगों को सस्ता नशीला पेय पदार्थ उपलब्ध कराने के लिए अवैधानिक तरीके से पेय पदार्थ बनाया जाता है। उसमें नशा बढ़ाने के लिए मिलाए जाने वाले पदार्थों की मात्रा असंतुलित रहती है, जिसके कारण वह जानलेवा पेय पदार्थ बन जाता है। और जब उसे पीकर कोई हताहत होता है तो उसे जहरीली शराब का नाम दे दिया जाता है।

हमारा चुनाव से पहले का गठबंधन है। चुनाव में चाहे जिस पार्टी को जितनी सीटें मिले, मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ही बनेंगे। इसमें कोई किंतु-परंतु का सवाल ही नहीं है। हमारा गठबंधन अटूट है। जो पहले तय हो गया है, उसका पालन सबको करना पड़ेगा।

● **सुशील मोदी**

मैं बचपन से लालबत्ती की गाड़ी में घूमना चाहती थी। एलजीबीटी पॉलिटिकल सेल की प्रमुख बनने के बाद अब मेरा सपना पूरा होता नजर आ रहा है। जब मैं 13 साल की थी, तो मां ने मुझे घर से निकाल दिया। घर से निकलने के बाद मैं मुंबई के विरार रेलवे स्टेशन पर आ गई। तमाम कठिनाईयों को झेलते हुए मैं राकांपा से जुड़ी। पार्टी ने आज मुझे मेरा मुकाम दे दिया है।

● **प्रिया पाटिल**

भारतीय क्रिकेट टीम में महेंद्र सिंह धोनी की जगह वैसे तो कोई नहीं ले सकता, लेकिन धोनी का स्थान लेने के लिए ऋषभ पंत सबसे सही विकल्प हैं। लोकेश राहुल को विकेट कीपिंग को लेकर ज्यादा परेशान नहीं होना चाहिए। जहां तक संजू सैमसन का सवाल है, तो उन्हें अच्छे विकेट्स पर बल्लेबाजी करने का हुनर सीखना होगा।

● **ब्रायन लारा**

पूर्व प्रधानमंत्री नवाज शरीफ सहित कुछ विपक्षी नेताओं पर देशद्रोह का केस दर्ज होने की जानकारी मुझे उस वक्त मिली जब मैं अपना बर्थडे केक काट रहा था। नवाज के खिलाफ केस एक व्यक्ति ने दर्ज कराया है। हमारा उससे कोई लेना-देना नहीं है।

● **इमरान खान**

मुझे इस बात का अंदाजा नहीं है कि फिल्म इंडस्ट्री के अंदर क्या होता है। मुझे भी काफी दिक्कतें हैं। जिस पर मैं कभी नहीं बोलती हूं। इंडस्ट्री में कास्टिंग काउच होता भी होगा, लेकिन यह उस एक्टर पर निर्भर करता है कि आखिर उसे क्या चाहिए। इंडस्ट्री में कास्टिंग काउच के साथ आप आगे बढ़ना और काम पाना चाहते हो तो पाओगे। कई अभिनेत्रियां ऐसी हैं जिन्होंने यह रास्ता अपनाया है। जिसकी वजह से वह सफल मुकाम पर भी पहुंची हैं। आपके पास कई ऑप्शन होते हैं। लेकिन मैं तो रात को आराम की नींद सोना चाहती हूं। इसलिए मैंने कभी भी शॉर्टकट का इस्तेमाल नहीं किया।

● **ईशा कोप्पिकर**

वाक्युद्ध

कांग्रेस और कुछ विपक्षी पार्टियां किसानों को गुमराह कर रही हैं। केंद्र सरकार ने कृषि बिल में जो संशोधन किया है वह किसानों के हित में है। लेकिन कांग्रेस द्वारा किसानों को गुमराह कर उन्हें सड़क पर उतारा जा रहा है। लेकिन कांग्रेस के षड्यंत्र की हवा धीरे-धीरे निकलती जा रही है। किसान अपना हित समझते हैं।

● **सुधांशु त्रिवेदी**

पिछले 6 साल में इस देश में किसानों और मजदूरों का जितना शोषण हुआ है, उतना पहले कभी नहीं हुआ था। उस पर कृषि बिल में किसान विरोधी बातें समाहित कर सरकार किसानों को गुलाम बनाने की तैयारी कर रही है। केंद्र की किसान विरोधी मानसिकता का हम विरोध कर रहे हैं। किसान इस बिल के विरोध में हमारे साथ हैं।

● **रणदीप सुरजेवाला**

परिवहन विभाग ने राजस्व वसूली में मारी बाजी

मप्र में परिवहन विभाग की गणना प्रदेश के सबसे भ्रष्ट विभागों में होती है। इस विभाग में भ्रष्टाचार का बोलबाला रहता है। कहा जाता है कि इस विभाग में सरकार को जितना राजस्व मिलता है, उससे कहीं अधिक इस विभाग के अफसर सफाचट कर जाते हैं। इसलिए इस विभाग में पदस्थ होने के लिए अफसरों में होड़ मची रहती है। माना जाता है कि इस विभाग में जो भी आता है, वह भ्रष्टाचार के रंग में रंग जाता है। इस विभाग का इतिहास भी कुछ ऐसा ही कहता है। लेकिन इस किवदंती को 1989 और 2006 बैच के 2 आईपीएस अफसरों ने तोड़ा है। इन दोनों अफसरों ने आपसी समन्वय और सूझबूझ से न केवल सरकार के खाली खजाने को भरा है, बल्कि आमजन को भी सहूलियतें प्रदान की हैं।

गौरतलब है कि कोविड-19 के कारण देश के साथ मप्र की अर्थव्यवस्था पर भी गहरा असर पड़ा है। सरकार की आमदनी के सभी स्रोत लगभग बंद पड़े हुए हैं। इस कारण सरकार का खजाना खाली पड़ा हुआ है। ऐसे में खाली खजाने को राहत पहुंचाने में परिवहन विभाग ने बाजी मारी है। परिवहन आयुक्त मुकेश कुमार जैन और अतिरिक्त परिवहन आयुक्त अरविंद श्रीवास्तव के कुशल मार्गदर्शन में विभाग ने न केवल टारगेट पूरा किया बल्कि अधिक कमाई कर सरकार को राहत पहुंचाई है।

गौरतलब है कि जुलाई में जब मुकेश कुमार जैन ने परिवहन विभाग के आयुक्त का पदभार संभाला था, उस समय विभाग की आर्थिक स्थिति भी डवाडोल थी। जून में विभाग को 232.50 करोड़ का लक्ष्य दिया गया था। उसके एवज में 142 करोड़ रुपए का ही राजस्व प्राप्त हो सका। ऐसे में जैन के सामने चुनौतियों का पहाड़ था। विभागीय सूत्रों का कहना है कि अतिरिक्त परिवहन आयुक्त के साथ मिलकर परिवहन आयुक्त ने राजस्व वसूली के लिए नीति बनाई और जुलाई में दिए गए लक्ष्य 182.50 करोड़ को पार करते हुए 204.78 करोड़ रुपए का राजस्व प्राप्त किया। वहीं अगस्त में लक्ष्य 157.50 करोड़ को पार करते हुए 195.02 करोड़ का राजस्व प्राप्त किया। इसी तरह सितंबर में 182.50 करोड़ की जगह 201.16 करोड़ का राजस्व प्राप्त किया। यह इस बात को दर्शाता है कि दोनों अधिकारियों ने मिलकर किस तरह सरकार के राजस्व में बढ़ोत्तरी की है।

गौरतलब है कि वित्तीय वर्ष 2019-20 के अंतिम माह में कोरोना के कारण संपूर्ण भारत में लॉकडाउन घोषित होने से एवं वित्तीय वर्ष में देश के परिवहन उद्योग में मंदी के कारण विभाग राजस्व वसूली में पिछड़ने लगा। वहीं मंदी के कारण पंजीकृत होने वाले वाहनों में गिरावट दर्ज की गई। इस कारण विभाग वित्तीय वर्ष 2020-21 में भी राजस्व वसूली में पिछड़ता गया। अप्रैल में जहां वर्ष 2019-20 में 262.60 करोड़ का राजस्व प्राप्त हुआ था, वहीं इस वर्ष मात्र 7.05 करोड़ ही प्राप्त हुआ। वहीं मई में पिछले वित्तीय वर्ष में 226.50 करोड़ का राजस्व प्राप्त हुआ था, वहीं वर्तमान वित्तीय वर्ष में 33.09 करोड़ रुपए ही राजस्व की प्राप्ति हो सकी। जून में लॉकडाउन खत्म होने के बाद विभाग को 232.50 करोड़ का लक्ष्य दिया गया, लेकिन 142 करोड़ रुपए ही राजस्व प्राप्त हुआ। ऐसे में जब जुलाई में मुकेश कुमार जैन परिवहन आयुक्त बने तो उनके सामने बड़ी चुनौतियां थीं। लेकिन विभागीय अधिकारियों के साथ समन्वय बनाकर उन्होंने इन चुनौतियों को पार पा लिया है।

कोविड-19 के इस दौर में जहां सरकार के सभी विभाग नुकसान की बात कर रहे थे ऐसे में परिवहन विभाग ने जुलाई से अपना वसूली लक्ष्य बहुत अच्छे से अचीव किया है। विभाग को उम्मीद है कि अक्टूबर के बाद स्थिति और सुधर जाएगी। दरअसल विभाग रणनीति बनाकर काम कर रहा है। जहां एक तरफ बकाया वसूली पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है, वहीं लोगों को वाहनों के रजिस्ट्रेशन के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। आरटीओ बैरियर्स पर औचक निरीक्षण के साथ ही मॉनिटरिंग भी की जा रही है। अगर किसी बैरियर से कम आय होती है तो तत्काल उसके कारणों की समीक्षा की जाती है। सभी क्षेत्रीय एवं जिला परिवहन कार्यालयों को मासिक लक्ष्य के अनुरूप वसूली करने का निर्देश दिया गया है। साथ ही हिदायत भी दी गई है कि राजस्व वसूली में किसी भी प्रकार की कोताही नहीं बरती जाना चाहिए। आम जनों की सुविधा हेतु लर्निंग लाइसेंस, ड्राइविंग लाइसेंस, वाहन रजिस्ट्रेशन के लिए स्लॉट की संख्या बढ़ा दी गई है। साथ ही कार्य के समय में भी वृद्धि की गई है। परिवहन कार्यालयों में शिष्टाचार का भी विशेष ध्यान रखा जा रहा है। वहां अपना कार्य कराने के लिए पहुंचने वाले लोगों के साथ मधुर व्यवहार किया जा रहा है। इससे यह देखा जा रहा है कि लोग दलालों के चंगुल में पड़ने की बजाय स्वयं अपना काम करवाने पहुंच रहे हैं।

● **कुमार राजेन्द्र**

बदनाम आरटीओ बैरियर्स से भी हुई कमाई

परिवहन आयुक्त मुकेश कुमार जैन ने जुलाई में जिम्मेदारी संभाली थी। जिम्मेदारी संभालने के बाद से ही वे राजस्व बढ़ोत्तरी के अभियान में जुट गए। इसके लिए कई कठोर नियमों को शिथिल किया गया। वहीं उन्होंने उन परिवहन बैरियर्स पर अपना ध्यान केंद्रित किया जहां से विभाग की कमाई कम हो रही थी। ऐसे आरटीओ बैरियर्स पर मॉनिटरिंग बढ़ाई गई। वहां औचक निरीक्षण किया गया। इससे बदनाम आरटीओ बैरियर्स से भी कमाई होने लगी। ओवर लोडिंग कर चलने वाले वाहनों, बकाया टैक्स वाले वाहनों और मोटरयान के नियमों का पालन नहीं करने वाले वाहनों की धरपकड़ के लिए अभियान चलाया गया। यही नहीं ड्राइविंग लाइसेंस बनाने के लिए समय सीमा बढ़ाई गई। छुट्टी के दिन भी ड्राइविंग लाइसेंस बनाए गए। प्रदेश में राजस्व की आय के स्रोत रही निजी बसों के संचालन के लिए भी उन्होंने रास्ता तैयार किया। सरकार के साथ बात करके निजी बसों के टैक्स माफ करवाए। इससे प्रदेश में राजस्व प्राप्ति के नए द्वार खुल गए हैं। जैन से विश्वास जताया है कि विभाग उतरोत्तर राजस्व वसूली में प्रगति करेगा।

मप्र में 28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव में सरकार का भविष्य दांव पर है। भाजपा और कांग्रेस अपनी-अपनी जीत के दावे कर रही है। लेकिन मतदाता अभी भी मौन हैं। ऐसे में दोनों पार्टियां मतदाताओं को रिझाने के लिए तरह-तरह के उपक्रम कर रही हैं। वर्तमान हालातों को देखते हुए यह साफ दिख रहा है कि इस उपचुनाव में दलित और किसान किंगमेकर बनेंगे।

दलित-किसान किंगमेकर...!

अन्नदाता बनेंगे भाग्य विधाता

28 विधानसभा सीटों पर होने वाले उपचुनाव में अन्नदाता भाग्य विधाता साबित हो सकते हैं। क्योंकि 28 सीटों में ज्यादातर सीटें कृषि बाहुल्य इलाकों से आती हैं। लिहाजा इस बार भी किसान ही तय करेगा कि सरकार का ताज किसके सर पहनाया जाए। यही वजह है कि कांग्रेस और भाजपा एक-दूसरे को साधने में जुटे हैं। दोनों दल किसान वोट बैंक पाने के लिए एक-दूसरे पर वादाखिलाफी का आरोप लगा रहे हैं। कांग्रेस जहां कर्जमाफी के मुद्दे पर आक्रामक है, तो भाजपा किसान कल्याण योजना और फसल बीमा के माध्यम से पलटवार कर रही है। दोनों पार्टियां अपने-अपने स्तर से आंकड़ों का सहारा ले रही हैं। पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ इशारा भी कर चुके हैं कि एक पेनड्राइव में उन सभी किसानों के नाम, कर्ज की राशि सहित अन्य जानकारी है, जो साबित करेगी कि कर्जमाफी हुई है। सामूहिक विवाह और सामाजिक सुरक्षा पेंशन की राशि बढ़ाने सहित अन्य मुद्दे प्रमुखता के साथ मतदाताओं के बीच रखे जा रहे हैं।

मप्र में 28 सीटों पर होने वाले उपचुनाव में इस बार दलित और किसान किंगमेकर बनेंगे, क्योंकि ये विधानसभा क्षेत्र किसान और दलित समुदाय बहुल हैं। इसलिए भाजपा और कांग्रेस के नेता चुनावी क्षेत्रों में दलित समुदाय और किसानों को साधने में जुट गए हैं। इसका असर यह देखने को मिल रहा है कि चुनावी क्षेत्रों में विकास का मुद्दा पूरी तरह गायब है। भाजपा और कांग्रेस के नेता एक-दूसरे पर आरोप लगाकर अपने आपको किसान और दलित हितैषी बताने में जुटे हुए हैं। उधर, बसपा इन दोनों पार्टियों की जीत का गणित बिगाड़ने के लिए मैदान में उतर चुकी है।

गौरतलब है कि 3 नवंबर को प्रदेश की 28 सीटों पर मतदान होने हैं और 10 नवंबर को नतीजे आएंगे। मुख्य प्रतिद्वंदी भाजपा और कांग्रेस ने अपने सभी प्रत्याशियों की घोषणा कर चुनावी मैदान में अपनी पूरी ताकत झोंक दी है। लेकिन कोरोना संक्रमण के कारण चुनावी माहौल बन नहीं पा रहा है। पूर्व के चुनावों की तरह **जनता घरों से निकल नहीं** पा रही है। इसलिए जनता का मूड कोई भांप नहीं पा रहा है। ऐसे में भाजपा और कांग्रेस दोनों पार्टियां सभी सीटें जीतने का दावा कर रही हैं।

मप्र में जिन 28 विधानसभा सीटों पर उपचुनाव हो रहा है उनमें-जौरा, सुमावली, मुरैना, दिमनी, अंबाह, मेहगांव, गोहद, ग्वालियर, ग्वालियर पूर्व, डबरा, भांडेर, करैरा, पोहरी, बमोरी, अशोकनगर, मुंगावली, सुरखी, मलहरा, अनूपपुर, सांची, ब्यावरा, आगर, हाटपिपल्या, मांधाता, नेपानगर, बदनावर, सांवेर और सुवासरा शामिल हैं। इनमें 11 सीटें आरक्षित हैं और 17 सीटें सामान्य हैं। उपचुनाव में आरक्षित सीटों अंबाह, गोहद, डबरा, भंडेर, करैरा, अशोकनगर, अनूपपुर, सांची, आगर, नेपानगर और सांवेर का बड़ा महत्व है। क्योंकि इन सीटों पर भाजपा, कांग्रेस और बसपा के बीच त्रिकोणीय मुकाबला है। उपचुनाव की अधिकतर सीटें ग्वालियर-चंबल संभाग की हैं जहां दलित समुदाय को चुनावों का किंगमेकर माना जाता है। दलित समुदाय के बहुतायत में होने और उप्र से इलाके के सटे होने से यहां पर बसपा का भी खासा प्रभाव है। बसपा बीते चुनावों में यहां अपनी मौजूदगी तो दर्शा ही चुकी है साथ ही हर चुनाव में अच्छा वोट बैंक भी उसे हासिल होता है।

इसलिए उपचुनाव में भाजपा, कांग्रेस और बसपा के बीच मुकाबला होना है। इसको देखते हुए कांग्रेस और बसपा ने अपने प्रत्याशियों की घोषणा की है। वहीं 25 विधानसभा सीटों पर भाजपा के प्रत्याशी पहले से तय थे, जबकि तीन अन्य प्रत्याशी की घोषणा अलग से की गई है।

मप्र की 28 विधानसभा सीटों पर 63.51 लाख मतदाता अपना वोट डालकर विधायक चुनेंगे। इसलिए यह उपचुनाव सबसे खास है क्योंकि पिछले 16 बरसों में महज 30 सीटों पर चुनाव हुए थे, लेकिन इस बार एक साथ 28 सीटों पर उपचुनाव होंगे। यह उपचुनाव सरकार और बड़े नेताओं के भविष्य तय करेंगे। दोनों ही पार्टी एड़ी-चोटी का जोर इस चुनाव में लगा रही हैं। लेकिन इस उपचुनाव में बसपा बड़ा किरदार निभा सकती हैं, इस बात को नजरअंदाज भी नहीं किया जा सकता है कि ग्वालियर-चंबल में दलित मतदाताओं को काफी निर्णायक माना जाता हैं। यह ही नहीं, यहां की दो सीटों पर बसपा 2018 विधानसभा चुनाव में प्रदेश में दूसरे नंबर पर रही थी। ग्वालियर चंबल की 16 में से

7 सीटों पर बसपा के प्रत्याशियों ने काफी निर्णायक व सम्मानजनक वोट हासिल किए थे। इसी बात से बसपा को इस उपचुनाव का गेम चेंजर माना जा रहा हैं। भले ही वह चुनाव न जीत सके लेकिन दोनों पार्टियों के वोट जरूर काट सकती हैं।

उप्र के हाथरस में दलित युवती के साथ हुई घटना के बाद दलित मतदाता एकजुट होते दिख रहे हैं। कांग्रेस और आम जनता दोनों ही हाथरस कांड को लेकर उप्र की भाजपा सरकार पर निशाना साध रही हैं। ऐसे में मप्र कांग्रेस भी हाथरस कांड को उपचुनाव में मुद्दा बनाने की तैयारी में है। जिस तरह से हाथरस की घटना के बाद मप्र में कांग्रेस ने विरोध-प्रदर्शन किए और हाल ही के दिनों में प्रदेश के अलग-अलग शहरों में महिलाओं और बेटियों के साथ दुराचार की घटनाएं हुई हैं उन्हें लेकर मप्र कांग्रेस प्रदेश की भाजपा सरकार पर खासी हमलावर रही है। प्रदेश की बेटियों और महिलाओं के साथ हुई अत्याचार की घटनाओं को हाथरस से जोड़कर विरोध प्रदर्शन किए जा रहे हैं जिससे लग रहा है कि कांग्रेस हाथरस में दलित युवती के साथ हुई घटना को मप्र में 28 सीटों पर होने वाले उपचुनाव में भी भुनाने की तैयारी में है।

ग्वालियर-चंबल अंचल की कई सीटों पर बसपा का खासा जनाधार है। साल 2018 में हुए विधानसभा चुनावों पर नजर डालें तो यहां बसपा ने कई सीटों पर निर्णायक वोट तो हासिल किए ही थे। कुछ सीटों पर दूसरे नंबर पर भी रही थी और कुछ सीटों पर इतने वोट हासिल किए थे जो जीत-हार को प्रभावित करने वाले थे। 2018 के चुनाव में 15 सीटों पर बसपा को निर्णायक वोट मिले थे। दो सीटों पर बसपा दूसरे नंबर की पार्टी रही थी। 13 सीटों पर बसपा प्रत्याशियों को 15 हजार से 40 हजार तक वोट मिले थे। मुरैना सीट पर भाजपा की हार और कांग्रेस की जीत का मुख्य कारण बसपा थी। पोहरी, जौरा, अंबाह में बसपा के कारण भाजपा तीसरे नंबर तक पहुंच गई थी।

साल 2018 के चुनावों के परिणामों पर नजर डालें तो ये साफ नजर आता है कि ग्वालियर-चंबल अंचल की कई सीटों पर बसपा ने भाजपा का खेल बिगाड़ा था और इसका फायदा कांग्रेस

को मिला था और कांग्रेस ग्वालियर-चंबल अंचल से सीटें जीतकर प्रदेश की सत्ता हासिल करने में कामयाब हो पाई थी। अगर इन सीटों का समीकरण देखें तो इनमें से अधिकतर ऐसी सीटें हैं जहां 2018 में भाजपा के राज्य स्तरीय कद्दावर नेताओं को शिकस्त देकर कांग्रेस के उम्मीदवार जीते थे, लेकिन अब यही कांग्रेस उम्मीदवार उपचुनाव में भाजपा प्रत्याशी के रूप में मैदान में हैं क्योंकि ज्योतिरादित्य सिंधिया के साथ उन सभी ने पाला बदल लिया है। भाजपा नेताओं के एक वर्ग में कांग्रेस से आए नेताओं को अपने काडर के ऊपर तरजीह देने से नाराजगी भी है लेकिन फिर भी पार्टी को लगता है कि राज्य में शिवराज सिंह चौहान और नरेंद्र मोदी के नाम पर इस नाराजगी से पार पाया जा सकता है।

यह उपचुनाव भाजपा और कांग्रेस के लिए प्रतिष्ठा का विषय बन गया है। दोनों पार्टियों के नेता एक-दूसरे के खिलाफ आरोपों की झड़ी लगा रहे हैं। आम चुनाव से भी अधिक नेता एक-दूसरे पर निजी हमले कर रहे हैं। शब्दों की मर्यादा टूट चुकी है। जो आमने-सामने शिष्टाचार का प्रदर्शन करते थे वे एक-दूसरे को चोर-डाकू, गद्दार जैसे विशेषणों से नवाज रहे हैं। एक-दूसरे को पछाड़ने के लिए रोज मुद्दे और नारे गढ़े जा रहे हैं, लेकिन उपचुनाव में भी कर्जमाफी ही सर्वाधिक चर्चा में है। दोनों पार्टियों ने इसे सबसे बड़ा मुद्दा बना रखा है। भाजपा पर तोहमत मढ़कर कांग्रेस अपना बचाव करना चाहती है तो भाजपा उसे नए सवालों पर घेर रही है। वर्ष 2018 के विधानसभा चुनाव में किसानों की कर्जमाफी बड़ा और निर्णायक मुद्दा था। दरअसल, कांग्रेस और कमलनाथ को यह भान था कि शिवराज सिंह चौहान की छवि किसान हितैषी है। किसानों के लिए भावांतर से लेकर कई योजनाएं भी शुरू हुई थीं। इसकी तोड़ के तौर पर कांग्रेस ने विधानसभा चुनाव में कर्जमाफी योजना को आगे रखा था। भाजपा को यह उम्मीद थी कि कांग्रेस की यह घोषणा उसके द्वारा बीते 15 वर्षों में किए गए किसान हितैषी कार्यों के आगे नहीं टिक पाएगी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। किसानों ने कमलनाथ के वचन पर भरोसा जताया और कांग्रेस का सत्ता से वनवास खत्म हो गया। अब उपचुनाव में भी दोनों पार्टियां किसानों पर डोरे डाल रही है। उनको भरोसा है कि उपचुनाव में किसान जिस ओर होगा, उसकी जीत होगी। इसलिए मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने चुनावी घोषणा से पहले प्रदेशभर के किसानों के लिए सौगातों की बौछार कर दी। वहीं कांग्रेस कर्जमाफी को चुनावी मुद्दा बना चुकी है। अब देखना यह है कि 28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव में दलित और किसान किसका साथ देते हैं। ये जिसके साथ होंगे जीत उनकी होगी।

● **सुनील सिंह**

भाजपा के लिए फायदेमंद त्रिकोणीय मुकाबला

उपचुनाव में बसपा ने मुकाबले का त्रिकोणीय बना दिया है। राजनीतिक विश्लेषकों का मानना है कि एक दर्जन से अधिक विधानसभा सीटों पर त्रिकोणीय मुकाबला भाजपा के लिए फायदे का सौदा हो सकता है। वहीं, जातीय समीकरणों को भाजपा अपने अनुकूल मान रही है। गौरतलब है कि ग्वालियर-चंबल अंचल में 16 सीटों पर उपचुनाव होने हैं। भाजपा और कांग्रेस, दोनों के ही नेता जातीय समीकरणों को साधने में जुटे हैं। वर्ष 2018 के विधानसभा चुनाव में अनुसूचित जाति (अजा) वर्ग के वोटर का मूड भांपने में भाजपा चूक कर गई थी। इससे अंचल में भाजपा को 13 सीटों का नुकसान हुआ था। कांग्रेस प्रदेश में सरकार बनाने में सफल हो गई। उपचुनाव में भाजपा की जातीय समीकरणों पर पूरी नजर है। भाजपा भिंड-मुरैना में सामान्य वर्ग के साथ पिछड़ा वर्ग और अनुसूचित जाति वर्ग के मतदाताओं को साधने में लगी है। ग्वालियर की पूर्व विधानसभा क्षेत्र में अनुसूचित जाति वर्ग के मतदाता उसकी चिंता का विषय बने हुए हैं। दरअसल, एट्रोसिटी एक्ट ने भाजपा के समीकरणों को गड़बड़ा दिया है। कांग्रेस से लंबे समय से नाराज चल रहा अजा वर्ग का मतदाता कोई विकल्प सामने न होने से कांग्रेस के साथ ही चला गया। इसका प्रमाण ग्वालियर पूर्व विधानसभा सीट के नतीजे हैं।

जांच को आंच नहीं

मप्र वाकई अजब है, गजब है। यहां कब क्या हो जाए कुछ नहीं कहा जा सकता। अब उद्यानिकी विभाग में यंत्रीकरण योजना में किसानों से करीब 100 करोड़ की ठगी का मामला ही ले लें। घोटाले की प्राथमिक जांच में आईएएस अफसर के नेतृत्व वाली चार सदस्यीय टीम ने विभागीय अफसरों को दोषी पाया था और मामले की विस्तृत जांच ईओडब्ल्यू या लोकायुक्त से करवाने की अनुशंसा की थी। लेकिन उद्यानिकी विभाग के मंत्री भारत सिंह कुशवाह इस अनुशंसा से सहमत नहीं थे। उनका मानना था कि जांच किसी अन्य एजेंसी से कराने के बजाय विभाग स्तर से ही कराना चाहिए। लेकिन मामला मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान की महत्वाकांक्षी योजना से संबंधित था, इसलिए ईओडब्ल्यू ने इस मामले को स्वविवेक से अपने हाथ में ले लिया है। ईओडब्ल्यू ने प्राथमिकी दर्ज कर जांच शुरू कर दी है। ईओडब्ल्यू ने उद्यानिकी आयुक्त को नोटिस देकर सारा रिकॉर्ड तलब कर लिया है, जिसके बाद अब सीधे डीलरों के खाते में राशि देना बंद कर दी गई है। अब किसानों के खाते में डायरेक्ट-टू-बेनिफिट (डीबीटी) से अनुदान की राशि डाली जाएगी, जबकि पिछले साल डीलरों को सीधे करोड़ों के भुगतान कर दिए गए थे।

दरअसल, एक तरफ मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान और उनकी सरकार 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने की योजना पर काम कर रही है। वहीं दूसरी तरफ यह बड़ा फर्जीवाड़ा सामने आया है। उद्यानिकी विभाग के अफसरों ने कंपनियों के साथ मिलकर यह घोटाला किया है, जिसमें **किसानों को बड़ी चपत लगी है।** दरअसल, इस पूरे घोटाले की नींव 1996 बैच के एक आईएफएस अफसर एम काली दुर्रई ने रखी है। दरअसल, दुर्रई उद्यानिकी विभाग में 1 अगस्त 2019 से लेकर 14 मई 2020 तक आयुक्त के पद पर रहे। इस दौरान उन्होंने केंद्र और राज्य सरकार के दिशा-निर्देशों को दरकिनार कर किसानों के लिए ऑफलाइन पावर टिलर खरीदने का ऑर्डर देकर घोटाले को अंजाम दिया है। इसलिए ईओडब्ल्यू ने इस मामले को गंभीरता से लिया है और एफआईआर दर्ज कर जांच शुरू कर दी है।

ईओडब्ल्यू के निरीक्षक पंकज गौतम ने प्राथमिकी दर्ज करने वाले नोटिस के साथ यंत्रीकरण योजना में 2011 से शुरू होने का रिकॉर्ड तलब किया है। उद्यानिकी आयुक्त पुष्कर सिंह से योजना का ब्यौरा मांगने के साथ ही किसानों को देने वाले यंत्र, नाम, पता, अनुदान राशि और डीलरों का रिकॉर्ड मांगा गया है। पॉवर टिलर जैसे उपकरणों की खरीदी, किसानों को यंत्र देने की प्रक्रिया, उनसे अनुदान राशि लेने के तरीके जैसे सभी नियमों का रिकॉर्ड बुलाया गया है। उधर, ईओडब्ल्यू नोटिस के बाद उद्यानिकी आयुक्त पुष्कर सिंह ने सभी जिलों में किसी भी योजना में खरीदी पर अनुदान राशि सीधे किसानों के खाते में डालने के निर्देश जारी कर दिए हैं। पिछले साल तत्कालीन उद्यानिकी आयुक्त एम कालीदुरई ने डीबीटी में बदलाव कर दिया था। केंद्र के नियम बदल दिए गए थे। योजना के नोडल अफसर राजेंद्र कुमार राजौरिया के निर्देशों पर प्रदेश में एमपी एग्रो से किसानों को अनुदान की जगह करोड़ों की राशि डीलरों के खातों में डाली जा रही थी। इस मामले में एमपी एग्रो के एमडी श्रीकांत बनोठ के साथ चार सदस्यीय टीम ने करने के बाद ईओडब्ल्यू जांच की सिफारिश की थी। उन्होंने उद्यानिकी अफसरों पर कार्रवाई चाही थी, **लेकिन मंत्री भारत सिंह कुशवाह ने नोडल अफसर राजेंद्र राजौरिया को बचाकर अपने गृह क्षेत्र में तबादला करा लिया है।**

गौरतलब है कि प्रदेश में अफसर मौका मिलते ही किसानों के नाम पर फर्जीवाड़ा करने का कोई मौका नहीं छोड़ रहे हैं। इसके लिए वे फर्जी कंपनियों का सहारा लेने से भी पीछे नहीं रहते हैं। वर्ष 2019-20 में उद्यानिकी विभाग के तत्कालीन आयुक्त एम कालीदुर्रई सहित कुछ अधिकारियों ने किसानों को पावर टिलर के स्थान पर पावर विडर व पावर स्प्रेयर वितरित कर दिए। पावर टिलर की कीमत लगभग 1.50 लाख रुपए होती है। जबकि पावर विडर और पावर स्प्रेयर 21 हजार से 52 हजार रुपए तक के आते हैं। प्रदेश में इस योजना में कुल 1618 पॉवर टिलर किसानों को कथित रूप से प्रदाय किए गए। इस घोटाले की शुरूआत मंदसौर में किसान की शिकायत पर लोकायुक्त जांच से प्रारंभ हुई। लोकायुक्त जांच में स्थानीय अधिकारियों ने बताया कि मुख्यालय से प्राप्त निर्देशानुसार अनुदान की राशि कंपनी के खाते में जमा की गई है। जबकि नियमानुसार अनुदान की राशि सीधे किसानों के खाते में जाना चाहिए। जब इस घोटाले की गूंज राजधानी तक पहुंची तो आनन-फानन में एक कमेटी बनाकर जांच कराई गई। अब इस पूरे मामले की जांच ईओडब्ल्यू कर रही है।

● **नवीन रघुवंशी**

पोर्टल ऑफलाइन किया, फर्जी रजिस्ट्रेशन किए

योजना में निजी कंपनियों को फायदे के लिए सुनियोजित षड्यंत्र रचा गया। उद्यानिकी संचालनालय के अफसरों ने कंपनियों के साथ मिलकर विभाग के पोर्टल पर किसानों के अनुदान वाले सिस्टम को बदल दिया। आदेश में पोर्टल में होने वाली प्रक्रिया ऑफलाइन कर दी गई। यंत्रीकरण योजना में निर्देशों में बदलाव के लिए डायरेक्टर एम कालीदुरई और योजना के नोडल अफसर राजेंद्र कुमार राजौरिया जिम्मेदार थे। इनके माध्यम से ही जिलों में प्रभारी उप संचालक और जिला उद्यान अधिकारियों को निर्देश दिए जाते थे। यंत्रीकरण घोटाले की जांच दो एजेंसियों ने की है। लोकायुक्त पुलिस ने मंदसौर में तीन करोड़ के घोटाले को पकड़ा है। दूसरी जांच विभाग ने प्रदेश स्तर पर एमपी एग्रो के एमडी श्रीकांत बनोठ की अध्यक्षता में चार सदस्यीय कमेटी से करवाई है। यह जांच उद्यानिकी मंत्री भारत सिंह कुशवाह को दोषियों पर जांच की सिफारिश के साथ सौंपी गई है। मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने भी सख्त कार्रवाई के निर्देश दिए हैं।

मेट्रो ने पकड़ी रफ्तार

मप्र की राजधानी भोपाल और व्यावसायिक राजधानी इंदौर में मेट्रो रेल परियोजना धीरे-धीरे रफ्तार पकड़ती जा रही है। भोपाल में तो परियोजना के तहत तेजी से काम हो रहा है। जमीनों के अधिग्रहण के लिए अधिकारी सक्रिय हो गए हैं। वहीं मेट्रो के पहले गर्डर की लॉन्चिंग का काम भी पूरा हो गया है। एक माह पहले 9 सितंबर को गर्डर लॉन्च करने के लिए लॉन्चर लगाया गया था। इसके साथ ही गर्डर के सिगमेंट बिछाने का काम शुरू हुआ। एक महीने में 12 सेगमेंट की लॉन्चिंग की गई। फील्ड में काम कर रहे मेट्रो के इंजीनियरों के अनुसार पहला स्लैब पूरा होने में एक माह लग गया। लेकिन इसके बाद एक-एक स्लैब एक-एक सप्ताह में बिछ जाएंगे। स्टेशन-आरबीआई के सामने मेट्रो स्टेशन का एक छोर होगा। दूसरा छोर बीडीए ऑफिस के सामने है। मेट्रो का अगला स्टेशन सुभाष नगर रेलवे क्रॉसिंग पर होगा।

मेट्रो के एम्स से करोंद (पर्पल लाइन) के 16.05 किमी लंबे रूट और भदभदा से रत्नागिरी (रेड लाइन) के दो रूटों पर 37 लोकेशन पर करीब 100 एकड़ जमीन का अधिग्रहण होना है। इसके बाद राजधानी में मेट्रो दौड़ेगी। पर्पल लाइन के लिए ही करीब 60 एकड़ जमीन का अधिग्रहण होना है। रेड लाइन में करीब 40 एकड़ जमीन की जरूरत पड़ रही है। भोपाल टॉकीज से अंडरग्राउंड ट्रेन एलिवेटिड रूट पर आएगी। जिसमें नादरा बस स्टैंड और सिंधी कॉलोनी के दो अंडरग्राउंड स्टेशन बनेंगे। पर्पल रूट का सिविल वर्क शुरू होने के साथ मेट्रो स्टेशन, पार्किंग, कास्टिंग यार्ड, शॉपिंग कॉम्प्लेक्स और अन्य जरूरतों के जमीन की जरूरत पड़ रही है। मेट्रो रेल कॉर्पोरेशन ने इसके लिए जिला प्रशासन को इन जमीनों का पजेशन देने का प्रस्ताव सौंप दिया है। मेट्रो के लिए ली जा रही जमीन में सरकारी जमीन के साथ रेलवे, भेल और अन्य विभागों की जमीनें शामिल हैं। कुछ जमीनों पर अतिक्रमण भी है। जबकि कई जगहों पर जमीनों का अधिग्रहण भी करना पड़ेगा।

बोगदा पुल से करोंद चौराहे के बीच 24 एकड़ का पुट्ठा मिल सहित बड़ा बाग कब्रिस्तान की 2.4 एकड़ जमीन भी शामिल है। भोपाल टॉकीज से अंडरग्राउंड ट्रेन एलिवेटिड रूट पर आएगी। इसके लिए पीएंडटी विभाग की 0.262 एकड़ जमीन जाएगी। यहां एक निजी मकान को भी तोड़ा जाएगा, जिससे मेट्रो का रूट क्लियर होगा। इसके बाद काजी कैंप सड़क पर निजी मकानों को भी हटाया जाना है। 10 एकड़ जमीन करोंद चौराहे के पास भी ली जाएगी। इधर रेट रूट के लिए भदभदा से लेकर रत्नागिरी तक 40 एकड़ जमीन ली जाएगी, इसमें ज्यादातर सरकारी जमीन है। जिसमें भदभदा तिराहे पर दस एकड़ और मत्स्य विभाग की 4 एकड़ जमीन शामिल है। बाकी अन्य जमीनें भी शामिल हैं। मेट्रो की पर्पल लाइन के लिए ग्रांड होटल के पाछे 0.39 एकड़ जमीन का अधिग्रहण करना है। ये जमीन नवाब साजिया सुल्तान के नाम पर रिकॉर्ड में दर्ज है। इसके अलावा यहीं पर 0.13 और 0.092 एकड़ जमीन चिन्हित की गई है। 0.046 एकड़, ग्रांड होटल के पीछे ये जमीन न्यू वल्लभ गृह निर्माण सोसायटी के पास है। जिसे वापस लेना है।

मेट्रो रूट में आ रहे विवादित जमीन और मकानों के कारण निर्माण कार्य नहीं रोका जाएगा। यदि मामला कोर्ट में लंबित है तब भी निर्माण जारी रखा जाएगा। ग्लू फैक्टरी, नर्मदा आइस फैक्टरी और पुट्ठा मिल की जमीनें भी मेट्रो के लिए अधिग्रहित हो चुकी हैं। मेट्रो एक्ट के अनुसार इन विवादों को सुलझाया जाएगा। एम्स से सुभाष नगर तक मेट्रो के जिस 6.22 किमी रूट पर सबसे बड़ी बाधा अब सुभाष नगर रेलवे क्रॉसिंग के पास की आजाद नगर झुग्गीबस्ती है। इन 225 परिवारों को पास की खाली जमीन पर शिफ्ट किया जाएगा। इन परिवारों को प्लॉट दिए जाएंगे। साथ ही स्टड फार्म के लिए आरक्षित 67.95 एकड़ जमीन को अतिक्रमण से बचाने के लिए बाउंड्री बनाई जाएगी। इधर, इस रूट पर पेड़ों की कटाई शुरू हो गई है। मेट्रो कंपनी ने इसके लिए राशि जमा करा दी है। अगले चरण में जिंसी क्षेत्र में रूट का काम शुरू होने पर चिकलोद रोड के मकानों को पीछे किया जाएग। इन मकान मालिकों को मुआवजा दिया जाएगा।

● राकेश ग्रोवर

इंदौर में कछुआ चाल से चल रहा प्रोजेक्ट

इंदौर मेट्रो का ट्रैक 31.55 किमी का है। इसमें सिर्फ 5.27 किमी के उस ट्रैक के टेंडर हुए हैं, जहां काम करना सबसे सरल था। इसके बाद की जद्दोजहद बेहद चुनौतीपूर्ण होगी, क्योंकि फिर मेट्रो शहरी क्षेत्र और इंदौर के सबसे घनत्व वाले इलाकों से निकलेगी। इसमें जिला कोर्ट से एयरपोर्ट तक 6 किमी का ट्रैक अंडरग्राउंड है। इसी ट्रैक के पास राजबाड़ा, खजूरी बाजार सहित इंदौर के पुराने मार्केट हैं। अंडरग्राउंड ट्रैक की खुदाई टनल बोरिंग मशीन से की जाती है। इस मशीन के कंपन को रोकने के लिए कुशन लगाने पड़ते हैं। ऐसा तब हो पाता है, जब जियो टेक्निकल सर्वे से पता चल सके कि इमारतों की नींव कितनी गहरी है। इस जियो टेक्निकल सर्वे की शुरुआत जनवरी 2019 में हुई, लेकिन बाद में काम बंद हो गया। अब इस सर्वे को ही करवाने में पांच से छह महीने लगेंगे। मेट्रो के पहले एमडी रहे आईएएस प्रमोद अग्रवाल ने जनवरी 2019 में जियो टेक्निकल सर्वे का टेंडर कराया था। काम शुरू होने के पहले ही तकनीकी गड़बड़ी के कारण नए सिरे से टेंडर की प्रक्रिया शुरू की गई। बाद में यह काम शुरू ही नहीं हो सका। कंसल्टेंट ने रूट की डिजाइन ही फाइनल नहीं की। इस प्रोजेक्ट से शुरुआती दौर में जुड़े अधिकारियों ने बताया, कंपनी ने बड़ी-बड़ी गलतियां कीं, जैसे मेट्रो को बोलिया सरकार की छत्री के नीचे से ही निकालने की डिजाइन बना ली थी।

बड़ी देर कर दी मेहरबां जागते-जागते

मप्र में राजघरानों से जुड़ी ऐतिहासिक धरोहरों को संभाल रहे ट्रस्टों की भूमिका पर सवाल उठने लगे हैं। कई राजघरानों की संपत्ति की देखरेख का जिम्मा लंबे समय से ट्रस्ट संभाल रहे हैं। यह चौंकाने वाली बात है कि ट्रस्ट के कर्ता-धर्ता पिछले दरवाजे से उन संपत्तियों को बेच भी रहे हैं। महारानी देवी अहिल्या बाई होल्कर एवं समूचे होल्कर राजघराने की धरोहरों के संरक्षण के लिए बनाए गए खासगी ट्रस्ट की कारस्तानी भी सामने आई है।

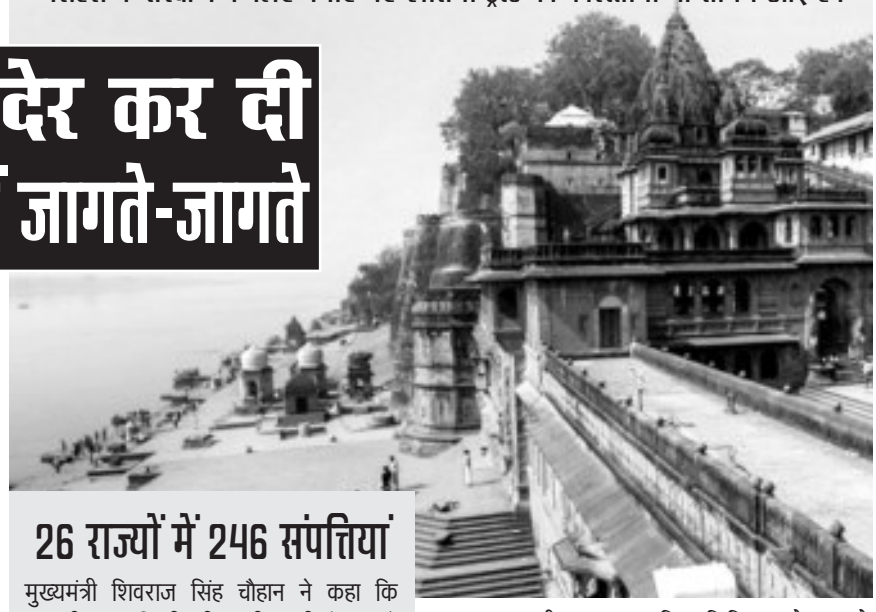

खासगी संपत्तियों के स्वामित्व का प्रकरण जीतने के बाद राज्य शासन वैसे तो बेहद उत्साहित है। मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने भी तत्काल अधिकारियों को संपत्ति का कब्जा लेने और खरीदी-बिक्री के मामलों पर त्वरित कार्रवाई के निर्देश दे दिए, लेकिन हकीकत यह है कि खासगी संपत्तियों में जितनी भी जमीनें हैं उन पर न केवल बाहुबलियों का कब्जा है, बल्कि उन्होंने ट्रस्ट को औने-पौने दाम देकर लीज के दस्तावेज भी बनवा लिए हैं।

खासगी ट्रस्ट की संपत्तियों को औने-पौने दाम पर बेचे जाने और कब्जे के मामलों की जांच ईओडब्ल्यू ने तेज कर दी है। खासगी ट्रस्ट के बारे में सरकार द्वारा कराई गई जांच में राजफाश हो चुका है कि उससे जुड़े व्यक्तियों ने प्रयागराज, हरिद्वार, पुष्कर सहित ऐतिहासिक और धार्मिक महत्व के स्थानों पर होल्कर राज परिवार की कई संपत्तियों को औने-पौने दाम पर बेच दिया। विक्रय के लिए वर्ष 1972 की उस डीड को आधार बनाया गया, जिसकी प्रमाणिकता ही सवालों के घेरे में है। बात सिर्फ संपत्ति को बेचने की नहीं है, बल्कि विरासत से छेड़छाड़ की भी है। जिन लोगों को संपत्तियों के रखरखाव का जिम्मा सौंपा गया था, उन्होंने तो विश्वासघात किया ही, प्रशासनिक तंत्र की लापरवाही ने भी उन्हें मौका दिया। बरसों से ट्रस्ट की संपत्ति को किनारे लगाने की शिकायतें हो रही थीं, पर प्रशासन आंख मूंदकर बैठा रहा।

वर्ष 2012 में मामला तब सामने आया जब शिकायत मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान के संज्ञान में आई। मुख्यमंत्री ने इसकी जांच का जिम्मा तत्कालीन प्रमुख सचिव और राजस्व के मामलों के जानकार मनोज कुमार श्रीवास्तव को सौंपा था। उन्होंने विस्तृत जांच करके रिपोर्ट दो नवंबर 2012 को मुख्य सचिव को सौंपी थी, लेकिन इस पर उस तेजी से काम नहीं हुआ, जिसकी मंशा मुख्यमंत्री ने जताई थी। मामला कोर्ट-कचहरी में उलझ गया। इसमें इंदौर के तत्कालीन कमिश्नर की लापरवाही भी सामने आ रही है, क्योंकि वह आंख मूंदे रहे। जांच रिपोर्ट के मुताबिक ट्रस्ट की मनमानी उजागर होने के बाद करीब 8 साल पहले इंदौर के तत्कालीन कलेक्टर ने एक आदेश जारी कर ट्रस्ट की संपत्तियों का नामांतरण राज्य शासन के नाम करने का आदेश दिया था। खासगी ट्रस्ट ने इस आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में याचिका दायर की थी। उच्च न्यायालय ने कलेक्टर के आदेश को निरस्त करते हुए याचिका स्वीकार कर ली। शासन ने इस निर्णय को चुनौती देते हुए दो अलग-अलग याचिकाएं दायर की।

26 राज्यों में 246 संपत्तियां

मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने कहा कि खासगी ट्रस्ट किसी की जागीर नहीं है। इसमें गड़बड़ी करने वालों पर कड़ी कानूनी कार्रवाई होगी। इसके बाद मुख्य सचिव इकबाल सिंह बैस ने संपत्तियों पर कब्जा लेने के निर्देश दिए। इधर, खासगी ट्रस्ट ने हाईकोर्ट के आदेश के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में एसएलपी दायर कर दी है। दूसरी तरफ, ट्रस्ट की संपत्तियों को लेकर नए खुलासे हो रहे हैं। जानकारी के अनुसार 26 राज्यों में 246 संपत्तियों की जानकारी मिली है। सरकार के पास मौजूद रिकॉर्ड के अनुसार, रामेश्वरम की तीन, जिसमें ज्योतिर्लिंग मंदिर के पास की कीमती जमीन भी है, के अलावा खंडवा की दो, पुष्कर की दो, हरिद्वार की एक और जेजुरी महाराष्ट्र स्थित 10 संपत्तियों के सौदे हो चुके हैं। यही नहीं, कुशावर्त घाट को बेचने का सौदा निजी ट्रस्ट बताकर कर दिया। शेष संपत्तियों को लेकर इलाहाबाद से लेकर हरिद्वार, वृंदावन, अयोध्या में 42 केस चल रहे हैं। खासगी ट्रस्ट की संपत्तियों को बेचने के लिए ट्रस्ट के पदाधिकारियों ने अलग-अलग तरह के खेल किए। साल 1962 में गठित ट्रस्ट को पहले सरकारी ट्रस्ट बताकर रजिस्ट्रार पब्लिक ट्रस्ट से संपत्ति बेचने के लिए छूट ले ली गई और तत्कालीन मुख्य सचिव एमपी श्रीवास्तव ने भी जून 1969 में संपत्ति बेचने की मंजूरी का पत्र जारी कर दिया। लेकिन इसके बाद 1972 में नई ट्रस्ट डीड बनाकर संपत्ति बेचने का प्रावधान कर दिया गया, जबकि मूल ट्रस्ट गठन में केवल संपत्ति के प्रबंधन की ही जिम्मेदारी थी।

इस बीच एक नागरिक विपिन धनोतकर ने भी जनहित याचिका उच्च न्यायालय में दायर कर दी। लंबी सुनवाई के बाद उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में खासगी ट्रस्ट के नियंत्रण वाली संपत्तियों को सरकारी संपत्ति घोषित कर दी। ऐसे में ट्रस्ट द्वारा संपत्तियों की बिक्री अवैध है। हाईकोर्ट ने सरकार को आदेश दिया है कि वह संपत्तियों को बेचने के मामले की जांच आर्थिक अपराध प्रकोष्ठ से कराए। दरअसल, खासगी ट्रस्ट में शामिल संपत्तियों को गुपचुप ढंग से बेचने का सिलसिला 37 साल पहले शुरू हो गया था। इसमें पुष्कर, रामेश्वरम, नासिक और हरिद्वार की संपत्तियां शामिल हैं। सबसे पहले राजस्थान के पुष्कर में ट्रस्ट का बाड़ा और दुकानें बेच दी गईं। यह बिक्री 1983-84 से 1998-99 के बीच हुई।

इसके बाद रामेश्वरम में वर्ष 2006 से 2008 के बीच ट्रस्ट की संपत्ति बेची गई। हरिद्वार में वर्ष 2009-10 में होल्कर बाड़ा, मंदिर और कुशावर्त घाट की संपत्तियों को बेचा गया। इस बीच हाईकोर्ट ने पूरी तरह से स्पष्ट कर दिया है कि यह सारी संपत्ति सरकारी है। होल्कर की संपत्तियों की देखभाल और उसके व्यय पर नियंत्रण के लिए 27 जून 1962 को खासगी ट्रस्ट बनाया गया था। संपत्तियों के राज्य शासन में विलय के बारे में 10 अगस्त 1971 तक किसी भी प्रकार का कोई भ्रम नहीं था। इस मामले में गड़बड़ी एक मार्च 1972 को पूरक (सप्लीमेंट्री) ट्रस्ट डीड से शुरू हुई। इसके माध्यम से ट्रस्टियों ने खुद को

राज्य शासन के नियंत्रण से मुक्त कर लिया। इसी सप्लीमेंट डीड के बाद संपत्तियों के खुर्द-बुर्द होने का खेल शुरू हुआ, जबकि ट्रस्ट को केवल संपत्तियों की देखभाल करने के अधिकार थे, न कि उन पर स्वामित्व के। ट्रस्ट अधिनियम के प्रविधानों के अनुसार ट्रस्टियों को संपत्ति के अंतरण का अधिकार ही नहीं था। हाईकोर्ट के स्पष्ट निर्देश के बाद माना जा रहा है खासगी ट्रस्ट से जुड़े लोग आगे का कानूनी रास्ता तलाश रहे हैं। इस प्रकरण के सामने आने के बाद सरकार की जिम्मेदारी बढ़ गई है कि वह ऐतिहासिक धरोहरों की देखरेख करने वाले ट्रस्टों को स्पष्ट कानूनी दायरे में लाने का उपाय करे।

खासगी ट्रस्ट में संपत्तियों की बिक्री और लीज पर देने के मामलों का खुलासा होने के बाद अब प्रशासन ने 246 संपत्तियों से जुड़ी जमीनों का हिसाब-किताब भी ट्रस्ट से मांगा है। बेची गई संपत्तियों की जांच में सामने आया, यह संपत्तियां धर्मस्थलों के रखरखाव के लिए थी। इसकी जानकारी ट्रस्ट की संपत्ति की सूची के साथ मिलान नहीं हो रही है। जैसे वाराणसी स्थित नागवा बगीचे की 2.56 एकड़ जमीन खासगी संपत्ति थी, इसकी आय का उपयोग वहां के धर्मस्थलों के लिए होता था। इससे बेचने की अनुमति के लिए लिखे पत्र से खासगी संपत्तियों को बेचने और सरकार के नुमाइंदों की मूक सहमति का खुलासा हुआ है। इस मामले में इंदौर में 2012 के पहले पदस्थ संभागायुक्तों की भूमिका पर सवाल उठ रहे हैं। 1969 के पत्र का अनुसरण आंख बंदकर क्यों किया?

दरअसल 1948 से पहले देश में 28 स्थानों पर होलकर रानियों ने 246 स्थानों का निर्माण किया। इनमें कई मंदिर हैं। जिस तरह से बेचने और लीज पर देने के प्रकरण सामने आए हैं, इनमें मंदिरों से जुड़ी जमीनें और अतिरिक्त संपत्तियां हैं। प्रारंभिक जांच में एक तथ्य सामने आया, ट्रस्ट की ओर से बनाए मंदिरों के साथ रखरखाव के लिए जमीनें या बगीचे रखे गए थे। इसका पहला प्रमाण 1969 में ट्रस्ट के सचिव एमएम जगदाले की ओर से लिखे पत्र से मिल रहा है। ट्रस्ट ने वाराणसी स्थित नागवा बगीचे को बेचने के लिए सरकार से अनुमति मांगी थी। 2.56 एकड़ जमीन बेचने के लिए तत्कालीन

मुख्य सचिव एमपी श्रीवास्तव ने यह कहते हुए मना कर दिया, सरकार ट्रस्ट से जुड़ी संपत्तियों और जमीनों को बेचने के मामले में पिक्चर में नहीं आना चाहती है, इसलिए ट्रस्ट की संपत्ति को बेचने के लिए किसी तरह की अनुमति का सवाल ही नहीं उठता है। आगे इसी पत्र ने ट्रस्टियों का हौंसला बढ़ाया और जमीनों के सौदे के रास्ते निकाले जाने लगे। हालांकि कोर्ट ने इस पत्राचार को वैधानिक नहीं माना। ट्रस्टियों ने एक सप्लीमेंट्री डीड बनाकर संपत्तियों को बेचने और लीज पर देने का सिलसिला शुरू कर दिया। सरकार इस बात की भी जांच करेगी।

इंदौर के खासगी ट्रस्ट द्वारा देशभर में हजारों करोड़ की संपत्तियां बेचने के मामले में मप्र सरकार के कई रिटायर्ड अफसरों की भूमिका सवालों के घेरे में है। क्योंकि ट्रस्ट के बोर्ड में शामिल रहे अफसरों की सहमति से दी ट्रस्ट ने देश के कई राज्यों में संपत्तियों को कौढ़ियों के मोल बेचा है। ऐसे में दो पूर्व मुख्य सचिव एमपी श्रीवास्तव एवं बीपी सिंह ने भी संपत्ति बेचने की मंजूरी के लिए हस्ताक्षर किए थे। तब बीपी सिंह इंदौर के संभागायुक्त थे। वे अब मप्र राज्य निर्वाचन आयोग के आयुक्त हैं। निष्पक्ष जांच के लिए बीपी को इस जिम्मेदारी से हटाया जा सकता है।

मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने देवी रानी अहिल्याबाई होल्कर के देशभर में संपत्तियों को बेचने पर नाराजगी जताई है। उन्होंने हाईकोर्ट के आदेश के बाद तत्काल लोक संपत्तियों के प्रबंधन के लिए अलग विभाग बना दिया है और मुख्य सचिव की अध्यक्षता में वरिष्ठ अफसरों की साधिकार समिति का गठन भी कर दिया है। मुख्यमंत्री ने हाईकोर्ट के निर्देश के परिपालन में संपत्तियां बेचने का मामला ईओडब्ल्यू को सौंप दिया है। संपत्तियां बेचने के मामले में कई रिटायर्ड अफसरों की भूमिका सामने आ रही है, ऐसे में जांच एजेंसी उनसे पूछताछ भी कर सकती है। बीपी सिंह 8 जून 2007 से 23 मई 2011 तक इंदौर संभाग के आयुक्त रहे हैं। खासगी ट्रस्ट ने इस दौरान प्रदेश एवं दूसरे राज्यों में संपत्तियों का सौदा किया था। खबर है कि खासगी ट्रस्ट मामले में बीपी सिंह की राज्य निर्वाचन आयोग से विदाई हो सकती है।

यदि खासगी ट्रस्ट की संपत्तियां बेचने के मामले में बीपी सिंह को राज्य निर्वाचन आयोग से हटाया जाता है तो वे तीसरे पूर्व मुख्य सचिव होंगे, जिनका मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने पुनर्वास खत्म किया है। इससे पहले पूर्व मुख्य सचिव आर परशुराम को सुशासन संस्थान एवं अंटोनी डिसा को रेरा के अध्यक्ष पद से हटाया जा चुका है।

● **अरविंद नारद**

महाराजा और महारानी ने अपना सबकुछ इंदौर को समर्पित किया

ट्रस्ट के सचिव राठौर का कहना है कि महारानी के परिवार पर 100-200 करोड़ की संपत्तियों को औने-पौने दामों में बेचे जाने का आरोप लगाया जा रहा है। उन्हीं महारानी के परिवार ने इंदौर की जनता के लिए अपना सबकुछ समर्पित कर दिया। उन्होंने बताया कि विभाजन के बाद भारत सरकार के कोविनेंट के जरिए इंदौर शहर की असीम संपदा महारानी के नाम पर की गई थी, जिसमें कलेक्टोरेट से लेकर भंवरकुआं, फलबाग और राजेन्द्र नगर तक की पूरी भूमियों के अलावा राजबाड़ा, लालबाग पैलेस से लेकर शहर की कई संपत्तियां शामिल थीं। लेकिन महारानी ने महाराजा यशवंतराव होलकर के रहते जहां एमवाय हास्पिटल सरकार को सौंपा, वहीं उनके अवसान के बाद वारिस के तौर पर मिली सारी संपत्तियां अपने निजी ट्रस्ट में शामिल कर शहर के लिए समर्पित करना शुरू की। इंदौर में यूनिवर्सिटी की स्थापना के लिए उन्होंने आरएनटी मार्ग स्थित अपनी भूमि जहां शासन को सौंप दी, वहीं लालबाग पैलेस भी शासन को सौंप दिया। इंदौर में जब कैट जैसे वैज्ञानिक अनुसंधान केंद्र का शुभारंभ करने की बात शुरू हुई तो जिला प्रशासन ने महारानी के स्वामित्व की 300 एकड़ जमीन मांगी।

किसान पर दोहरी मार

देश को 60 फीसदी सोयाबीन उत्पादन देने वाले मप्र में इस बार नकली बीज और मौसम की मार से पीले सोने की पैदावार 65 फीसदी गिरी है। इससे प्रदेश के किसानों को करोड़ों रुपए की चपत लगी है। कृषि विशेषज्ञों के अनुसार, सोयाबीन की फसल को सबसे अधिक नकली बीजों से नुकसान पहुंचा है। इस बार प्रदेश की कंपनियों ने बड़ी मात्रा में सोयाबीन का नकली बीज खपाया है। इस कारण जहां खेती का रकबा घटा है, वहीं पैदावार भी घटी है। वहीं कंपनियां नकली बीज बेचकर मालामाल हो गई हैं।

गौरतलब है कि प्रदेश में 144.6 लाख हेक्टेयर में खरीफ बुवाई का लक्ष्य रखा गया था। जिसमें 60 लाख हेक्टेयर में सोयाबीन की बुवाई होनी थी। लेकिन 58.46 लाख हेक्टेयर ही बोवनी हो पाई। मौसम की बेरूखी और नकली बीज-खाद की मार से फसल तबाह हो गई। जिससे उत्पादन में गिरावट आई है। इस साल सरकार द्वारा गेहूं की रिकार्ड 130 लाख मीट्रिक टन खरीदी करने से किसानों ने खरीफ की फसलों की बुवाई और उत्पादन पर अधिक जोर दिया। किसानों के उत्साह को देखते हुए बीज और दवा कंपनियों ने अधिक उत्पादन का सपना दिखाकर किसानों को नकली बीज और खाद बेच दिया। इसका असर यह हुआ कि किसान की सोयाबीन की फसल खराब हो गई और उत्पादन गिर गया। कृषि विशेषज्ञ इसे मप्र के किसानों के साथ हुआ अब तक का सबसे बड़ा घोटाला मान रहे हैं।

कृषि विभाग के सूत्रों का कहना है कि किसानों से साथ यह फर्जीवाड़ा संगठित तरीके से किया गया है। इस फर्जीवाड़े को बीज कंपनियों ने अधिकारियों के साथ मिलकर किया और मारा गया बेचारा किसान। दरअसल, कृषि विभाग के अधिकारियों की सलाह पर किसानों ने दोगुने-तिगुने उत्पादन के लालच में कंपनियों से महंगे दाम पर सोयाबीन का बीज और दवा खरीदकर बुवाई की थी। लेकिन कईयों के खेत में फसल ही नहीं उगी तो कईयों की फसल पीली पड़ गई थी। जो फसल बच गई उनकी फलियों में दाने नहीं आए थे। बिना दाने और पीली फसल देखकर किसानों के चेहरे भी पीले पड़ गए। अब जब फसल निकली है तो उसे देखकर किसान के आंसू भी निकल आए हैं। क्योंकि एक तो उत्पादन कम हुआ है, उस पर दाने भी छोटे हैं। जिससे उन्हें फसल का भाव नहीं मिल पा रहा है।

किसानों के साथ लाइसेंसधारी बीज कंपनियां और अधिकारी मिलकर सुनियोजित तरीके से फर्जीवाड़े का खेल करते हैं। कृषि विशेषज्ञ किसानों को सलाह देते हैं कि अच्छी फसल के लिए एक हेक्टेयर में 20-25 क्विंटल बीज डालिए, मगर मैदानी कृषि अधिकारी किसानों से एक हेक्टेयर में 50-60 क्विंटल बीज डालने को कहते हैं। यही नहीं अधिकारी बीज उत्पादक कंपनी की भी जारकारी देते हैं। दरअसल, यह कंपनियों की सांठ-गांठ से किया जाता है। उसके बाद कंपनियां अपने बीजों को विक्रेताओं को उपलब्ध कराती हैं। यही नहीं अपने बीज को प्रमाणिक बताने के लिए कंपनियां भी फर्जीवाड़ा करती हैं। कंपनियां कुछ किसानों को 50 रुपए से लेकर 200 रुपए तक का लालच देकर उनसे उनके दस्तावेज और हस्ताक्षर कराकर ये साबित कर देती हैं कि उन्होंने फलां गांव के फलां किसान से बीज को लेकर अनुबंध किया और उनसे बीज की खेती कराई। मगर कंपनियां किसानों से बीज की खेती कराती ही नहीं बल्कि मंडियों से 3000 रुपए प्रति क्विंटल की दर पर सोयाबीन खरीदकर उसमें से मोटा दाना अलग करके उसे ही थैलियों में पैक कर और मार्क लगाकर किसानों को प्रमाणित बीज बताकर बेच देती हैं।

अधिकारियों और कंपनियों की सांठगांठ में किसान इस कदर फंस जाता है कि वह नकली बीज के जाल में उलझ जाता है। बेचारा किसान पूरे भरोसे के साथ नकली बीज को 6000 रुपए से लेकर 7000 रुपए क्विंटल की दर से खरीदता है। यानी कंपनियां सीधा दोगुना मुनाफा कमाती हैं और किसान को दोगुनी चपत लगती है। एक तो उसे तिगुना नकली बीज खेतों में डालना पड़ता है तो वहीं 3000 रुपए का सोयाबीन का दाना उसे दोगुने दाम पर खरीदना पड़ता है। और सबसे बड़ी बात ये कि उत्पादन तो आधा हो ही जाता है, नकली बीज से अगर फसल आ भी गई तो वो बीमारियों की चपेट में आ जाती है। इस बार प्रदेश में सोयाबीन की फसल इसी फर्जीवाड़े का शिकार हुई है। प्रदेश का मालवा क्षेत्र हो या कोई अन्य क्षेत्र हर जगह सोयाबीन की फसल खराब हुई है। इससे किसानों को दो हजार करोड़ से अधिक रुपए की चपत लगी है। मामला सामने आने के बाद बीज प्रमाणीकरण के एमडी बीएस धुर्वे ने पूरे मामले की जांच के आदेश दिए हैं।

● **लोकेन्द्र शर्मा**

काली पड़ी चमक

कृषि विभाग से मिले आंकड़ों के अनुसार प्रदेश में इस बार रिकार्ड 58.46 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में सोयाबीन की बोवनी हुई थी। इस कारण उम्मीद जताई जा रही थी कि गेहूं की तरह सोयाबीन की भी बंपर पैदावार होगी, लेकिन नकली बीज, अतिवृष्टि, वायरस और कीटों के प्रकोप ने उम्मीदों पर पानी फेर दिया। पीला सोना कहलाने वाली सोयाबीन न सिर्फ काली पड़ गई बल्कि दाना भी सिकुड़ गया। इस कारण न्यूनतम 2000 और अधिकतम 3650 रुपए क्विंटल ही भाव मिल पा रहे हैं। राजधानी भोपाल में कृषि विभाग के क्राप कटिंग (फसल कटाई प्रयोग) में प्रति हेक्टेयर 50 किलो से दो क्विंटल तक पैदावार हुई है, जबकि अनुकूल स्थिति होने पर प्रति हेक्टेयर 10 से 15 क्विंटल तक सोयाबीन फसल होती है। कोरोना संक्रमण से जूझ रहे किसानों को सोयाबीन की कम पैदावार ने बड़ी आर्थिक चोट मारी है। भोपाल के अलावा सीहोर, शाजापुर, आगर, राजगढ़, उज्जैन, देवास आदि जिलों में भी यही स्थिति है। मंडियों में सोयाबीन बेचने के लिए आने वाले किसानों के आंसू निकल रहे हैं। उनकी पीड़ा यह है कि कर्ज लेकर सोयाबीन की बुवाई की थी, किंतु पैदावार इतनी भी नहीं हुई है कि लागत निकल जाए। ऐसे में रबी फसल के लिए फिर से कर्ज के बोझ तले दबना पड़ेगा।

काले जहर की तस्करी

मप्र के मालवा की मिट्टी अपनी उर्वरा शक्ति के लिए जानी जाती है। इस क्षेत्र में जहां सोयाबीन की खेती से किसान मालामाल होते हैं, वहीं नीमच व मंदसौर में अफीम की खेती तस्करी को जन्म देती है। नीमच व मंदसौर मादक पदार्थ तस्करी का देश में सबसे बड़ा सेंटर है। यहां से अफीम पैदावार के बाद देशभर के अन्य क्षेत्र में अफीम और उससे बनने वाले अन्य मादक पदार्थ की तस्करी होती है। ध्यान दे तो सुशांत सुसाइड मिस्ट्री में भी ड्रग्स पार्टी का उजागर हुआ है और मुंबई नारकोटिक्स विभाग सतर्क होकर कार्रवाई कर रहा है। लेकिन इसी विभाग की कमजोरी है कि मप्र से मादक पदार्थ की तस्करी मुंबई तक होती है।

अफीम के फूल सफेद होते हैं, लेकिन उसे काला जहर कहा जाता है। मप्र में अफीम के साथ-साथ खेतों में तस्करों की जड़ें भी पनपती हैं। तस्करों की नजरें खेतों में अफीम के बीज पड़ते ही वहां जम जाती हैं। यूं तो अफीम की खेती सरकारी एजेंसी सेंट्रल ब्यूरो ऑफ नारकोटिक्स की देखरेख में होती है, लेकिन डोडे में चीरा लगते ही तस्कर और भी ज्यादा सक्रिय हो जाते हैं। कुछ चुनिंदा गांवों में ही डोडे (अफीम के फूल के नीचे उगने वाला हिस्सा) निकालने का काम होता है। तहकीकात में सामने आया कि तस्करी का नेटवर्क इन्हीं के खेतों के इर्द-गिर्द घूमता है। खेत में तैयार अफीम पर सबसे पहले सरकार का हक होता है, लेकिन सरकार को तय स्टॉक देने के बाद कई किसान बची हुई अफीम तस्करों के हवाले कर देते हैं। तस्करों को बेचने के लिए अफीम को सीक्रेट रूप से जमीन में दबाकर रखा जाता है।

हाल ही में इंदौर नारकोटिक्स विंग ने मुखबिर सूचना पर इंदौर गांधी हॉल एवं फायर ब्रिगेड के ऑफिस के बीच पत्थर गोदाम समीप एक काले रंग की स्कूटी एमपी 09 यूवी 5326 की तलाशी कर उसकी डिक्की में रखी करीब दो किलोग्राम ब्राउन शुगर जब्त की है। वहीं तस्करी में आरोपी इंदौर भंवरकुआ निवासी अजय पिता शिवकुमार जैन उम्र 51 वर्ष और इंदौर तेजाजी नगर निवासी सुशांत तिपा दुलाल मंडल उम्र 49 वर्ष को दो करोड़ की ब्राउन शुगर के साथ एनडीपीएस एक्ट में गिरफ्तार किया है। पुलिस की पूछताछ में तस्करों ने बताया कि मंदसौर नई आबादी निवासी लालसिंह पिता कालू सिंह चौहान उम्र 53 वर्ष के पास से ब्राउन शुगर खरीदी है। वह नीमच और मंदसौर से माल खरीदकर ट्रेन के रास्ते कोलकाता तक माल सप्लाई करते हैं। फिलहाल पुलिस ने मंदसौर निवासी लालसिंह को भी गिरफ्तार कर लिया है और अंतर्राज्यीय तस्करों की चेन खोलने में पुलिस जुट गई है। उज्जैन रेंज के आईजी राकेश गुप्ता कहते हैं कि नीमच, मंदसौर और रतलाम के कुछ भाग में अफीम का उत्पादन होने से यहां से अन्य राज्यों में तस्करी भी होती है। खासकर पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, दिल्ली, मुंबई और कोलकाता तक भी तस्कर सक्रिय हैं। लेकिन पुलिस लगातार सतर्क होकर इनके प्रति कार्रवाई करती है। वहीं नारकोटिक्स विभाग भी पूरा इन्हीं पर कार्रवाई करता है।

अफीम की हरी-भरी लहलहाती फसल, प्याज की तरह लगे फल और खिले हुए फूल किसी का भी मन मोह लेंगे। मगर यह फसल देखकर अफीम तस्करों की बांछें खिल जाती हैं। नीमच व मंदसौर पोस्ता की वैध और अवैध खेती के गढ़ बन गए हैं, जिससे अफीम निकलता है। सरकारी रिपोर्ट के अनुसार, हर साल अफीम की अवैध खेती नष्ट की जाती है। यह सब माफिया, तस्करों, सफेदपोश और अफसरों की मिलीभगत से होता है। दरअसल अफीम की प्रोसेसिंग करके ही ब्राउन शुगर और हेरोइन बनाई जाती है। जानकार बताते हैं कि कम कीमत और बेहतर गुणवत्ता की वजह से यहां के अफीम की मांग काफी है। इसीलिए देशभर के तस्करों की नजर मप्र के अफीम की खेती पर रहती है। जैसे ही अफीम की फसल तैयार होती है, तस्कर नीमच और मंदसौर में सक्रिय हो जाते हैं।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार, नीमच जिले में मादक पदार्थ तस्करी के मामले 2019 में सर्वाधिक सामने आए हैं। इनमें प्रभावी कार्रवाई करते हुए पुलिस ने आरोपियों को सलाखों के पीछे पहुंचाने का काम किया है। पुलिस की इस कार्रवाई में अफीम, गांजा और डोडाचूरा की जब्त की गई मात्रा में भी इजाफा हुआ है। जब्त मादक पदार्थ की कीमत करीब 2 करोड़ रुपए से अधिक आंकी गई है। पुलिस की इस कार्रवाई से मादक पदार्थ तस्करों में खौफ है। मप्र के नीमच, मंदसौर और रतलाम जिले के जावरा में अफीम की खेती होती है। केंद्रीय नारकोटिक्स ब्यूरो की मॉनीटरिंग में अफीम की खेती के कार्य में करीब 30 हजार से अधिक लाइसेंसी किसान जुटे रहते हैं। किसान, उनके परिजन और श्रमिक दिन-रात एक कर अफीम और उससे जुड़ी पैदावार लेते हैं। यह खेती सरकारी नियंत्रण में होती है। इसके बावजूद अफीम, डोडाचूरा और अन्य तरह के मादक पदार्थ की तस्करी की आशंका से इंकार नहीं किया जा सकता। जिले में 2015 से 2019 तक के मादक पदार्थ तस्करी के मामलों में कार्रवाई का आंकड़ा देखें तो पूर्व की तुलना में साल 2019 में मादक पदार्थ तस्करी के मामलों में अधिक कार्रवाई हुई है।

● **जितेन्द्र तिवारी**

मिलावटी अफीम भी थमा देते हैं

नशे की इस मंडी में ग्राहक देखकर माल तय होता है। जानकार लोगों को असली अफीम की खेप दी जाती है जबकि अनजान और नए लोगों को मिलावटी पकड़ा दी जाती है। इनमें बच्चों के दूध के साथ पिए जाने वाले बॉर्नविटा, बूस्ट, कॉम्प्लान और कॉफी पाउडर जैसी चीजें मिला दी जाती हैं। साथ ही नशीली दवाएं मिलाकर आधा किलो अफीम को दो से ढाई किलो तक बना दिया जाता है। मादक पदार्थ तस्करी के मामले में पुलिस के सामने दिक्कत आती है कि इसमें पकड़े जाने वाले अधिकांश आरोपी कोरियर या डिलेवरी बॉय होते हैं। मुख्य आरोपी पर्दे के पीछे से काम करते हैं। जांच के बावजूद भी पुलिस वास्तविक आरोपियों तक नहीं पहुंच पाती। इसका कारण है कि कोरियर या डिलेवरी बॉय को माल की खेप लाने और ले जाने के नाम पर मोटी रकम मिलती है। पकड़े जाने पर कानूनी मदद भी मुहैया कराई जाती है। यहीं कारण है कि वे मुख्य आरोपियों के नामों का खुलासा नहीं करते हैं।

जानलेवा प्रदूषण

कोरोना वायरस संक्रमण के कारण गत महीनों में किए गए लॉकडाउन के कारण पूरे देश में यह शोर जोर-शोर से मचाया जाने लगा था कि समूचा देश प्रदूषण मुक्त हो गया है। प्रकृति ने देश को नई ऊर्जा दी है। कहा गया कि वायु से लेकर जल तक सब शुद्ध हो गए हैं। वह लॉकडाउन काल था। लेकिन जैसे-जैसे अनलॉक बढ़ा, हालात बद से बदतर होते गए। सब कुछ तबाह हो गया। बात करें वायु प्रदूषण की तो हाल ही में जारी ग्रीन पीस की ताजा रिपोर्ट के अनुसार सिंगरौली जिला देश का पहला और दुनिया का छठवां सबसे ज्यादा सल्फर डाई-ऑक्साइड उत्सर्जन वाला जिला बन गया है।

गौरतलब है कि सिंगरौली को मप्र की ऊर्जा राजधानी भी कहा जाता है। बिजली उत्पादन से लेकर यहां की अन्य औद्योगिक इकाइयों में कोयले की खपत बहुतायत मात्रा में होती है। कंपनियां प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के दिशा-निर्देशों को दरकिनार करते हुए कोयले का उपयोग करती हैं। इसके कारण यहां प्रदूषण अधिक होता है। बता दें कि वायु प्रदूषण को लेकर चिंतित पर्यावरण एक्टिविस्ट ने मार्च में जब कोरोना के चलते लॉकडाउन घोषित किया गया उसके कुछ दिन बाद से ही केंद्र व राज्य सरकारों को सलाह देना शुरू किया था कि प्रकृति ने धरती को स्वच्छ कर जिस तरह से प्रदूषण मुक्त किया है, उसे बरकरार रखने के लिए अब जरूरी कदम उठाने ज्यादा जरूरी हैं। इस संबंध में वर्षों तक सिंगरौली और आसपास के इलाकों में वायु प्रदूषण के लिए काम करने वाली वाराणसी की पर्यावरण एक्टिविस्ट केयर 4 एयर की प्रमुख एकता शेखर व शानिया अनवर ने केंद्र और राज्य सरकारों को पत्र भी लिखा था। लेकिन उस पर कोई गौर नहीं फरमाया गया। नतीजा सामने है।

ग्रीन पीस की ताजा रिपोर्ट के अनुसार सल्फर डाई-ऑक्साइड के उत्सर्जन में सिंगरौली को देश का पहला और विश्व का छठवां शहर बताया गया है। इस रिपोर्ट के अनुसार पिछले दो सालों से सिंगरौली में इसकी लगातार ग्रोथ हो रही है। ग्रीन पीस की इस रिपोर्ट ने ऊर्जांचल की आबो हवा को सबसे प्रदूषित करार देते हुए प्रदूषण की रोकथाम के लिए शासन व प्रशासन के स्तर से हो रहे प्रयासों का खुलासा कर दिया है। ग्रीन पीस इंडिया और सेंटर फॉर रिसर्च ऑन एनर्जी एंड क्लीन एयर की सालाना रिपोर्ट के अनुसार देश में एसओटू का उत्सर्जन 2018 की तुलना में 2019 में रिकॉर्ड 6 प्रतिशत कम हुआ है। यह पिछले चार साल में सबसे बड़ी गिरावट है। बावजूद इसके भारत लगातार पांचवें साल दुनिया के सबसे बड़े एसओटू उत्सर्जक देशों की सूची में शीर्ष पर है। रिपोर्ट बताती है कि 2019 में यहां (भारत) दुनिया के कुल मानव निर्मित एसओटू का सर्वाधिक 21 प्रतिशत उत्सर्जन हुआ, जो इसी सूची में भारत के बाद दूसरे स्थान पर मौजूद रूस का लगभग दोगुना है। वहीं चीन तीसरे नंबर पर है। वार्षिक रिपोर्ट में सल्फर डाई-ऑक्साइड को सबसे बड़ा कार्बन उत्सर्जक बताया गया है। जानकारों के मुताबिक एसओटू एक जहरीली हवा प्रदूषक है जो स्ट्रोक, हृदय रोग, फेफड़ों के कैंसर और अकाल मौत के जोखिम को बढ़ाती है। रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में इसके बड़े उत्सर्जन केंद्र सिंगरौली, नेवेली, सिपथ, मुंद्रा, कोरबा, बोंडा, तमनार, तालचेर, झारसुगुड़ा, कच्छ, चेन्नई, रामागुंडम, चंद्रपुर, विशाखापट्टनम और कोराडी के थर्मल पावर स्टेशन हैं।

ग्रीन पीस इंडिया के क्लाइमेट कैंपेनर अविनाश चंचल कहते हैं, हम तीन शीर्ष उत्सर्जक देशों में एसओटू में कमी देख रहे हैं। भारत में हमें इसकी झलक मिलती है कि किस तरह से इसमें कमी आई है। 2019 में अक्षय ऊर्जा की क्षमता में विस्तार हुआ, कोयले पर निर्भरता कम हुई और हमने वायु की गुणवत्ता में सुधार देखा लेकिन अभी हम सुरक्षित हवा के लक्ष्यों से दूर हैं। हमें अपनी सेहत और अर्थव्यवस्था के लिए कोयले से दूरी बनाकर नवीकरणीय स्रोत को गति देनी चाहिए। उन्होंने बताया है कि 2015 में पर्यावरण मंत्रालय ने कोयले से चलने वाले बिजली स्टेशनों के लिए एसओटू के उत्सर्जन की सीमा तय की थी लेकिन ये पावर प्लांट अपने यहां दिसंबर 2017 की समय सीमा तक एफजीडी इकाइयां नहीं लगा सके। ऐसे में यह समय सीमा 2022 तक बढ़ा दी गई, क्योंकि जून 2020 तक अधिकांश बिजली संयंत्र तय मानकों का बिना पालन किए काम कर रहे थे। सिंगरौली के पावर प्लांट्स में एफजीडी अभी पूरी तरह से एक्टिवेट नहीं हैं।

● **प्रवीण कुमार**

जानलेवा हादसे से सबक नहीं

प्रदेश के सिंगरौली में रिलायंस सासन पावर लिमिटेड अपने औद्योगिक जानलेवा हादसे के बाद भी सबक नहीं ले पाया है। घटना को चार माह बीत चुके हैं और अब भी करीब 2 लाख टन राख (फ्लाई ऐश) गवइया नाले में व 2.15 लाख टन फ्लाई ऐश तटबंध टूटने वाली जगह के बगल कंपार्टमेंट 5 क्षेत्र में फैली है। गवइया नाला रिहंद नदी से जुड़ा है और बरसात के कारण पूरी संभावना है कि नाले से फ्लाई ऐश का बहाव फिर हो और रिजर्वायर प्रदूषित हो जाए। कंपनी ने हादसे में मरने वाले कुछ पीड़ितों को मुआवजा देने का काम भले ही जोर-दबाव में तेजी से किया है लेकिन नदी व कृषि क्षेत्र में फैली जहरीले फ्लाई ऐश की सफाई का काम वह बहुत मंद गति से कर रही है। फ्लाई ऐश से प्रभावित होने वाला गवइया नाला लगभग 6.5 किलोमीटर लंबा, 30 मीटर चौड़ा और औसतन एक मीटर गहरा है। 14-15 जुलाई को प्रभावित जगह पर किए गए केंद्र व राज्य के अधिकारियों की निरीक्षण रिपोर्ट में यह बात सामने आई है। रिपोर्ट में तटबंध टूटने का कारण ऊपरी सतह पर हाइड्रोस्टेटिक प्रेशर को बताया गया है। हाइड्रोस्टेटिक प्रेशर यानी तटबंध के ऊपरी सतह पर काफी वेग होने के कारण निचले सतह क्षेत्र (लो-लाइंग एरिया) में तटबंध पर अत्यधिक दबाव बन गया जिससे तटबंध क्षतिग्रस्त हुआ और जहरीली राख के कारण जान-माल का काफी नुकसान हुआ।

कंपनियां मालामाल

किसानों की भलाई के नाम पर शुरू की गई प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना बीमा कंपनियों के लिए कितनी लाभदायक है इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि किसानों की लाखों रुपए की फसल बर्बाद होने पर जहां उन्हें मुआवजे के रूप में 1 रुपए, 4 रुपए, 10 रुपए, 12 रुपए, 50 रुपए मुआवजे के रूप में मिले हैं, वहीं कंपनियों ने 3 साल में 16,098.69 करोड़ रुपए का मुनाफा कमाया है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना में कंपनियों की चालबाजी साफ दिखने लगी है, इसलिए मप्र सहित कई राज्य इससे बाहर निकलने को बेताब हैं। कृषि मंत्रालय की ही एक रिपोर्ट के मुताबिक कुछ राज्यों ने इस योजना से बाहर होने को चुना है। बिहार, पश्चिम बंगाल, मणिपुर, मेघालय, जम्मू-कश्मीर, आंध्र प्रदेश में (रबी 2019-20) योजना का कार्यान्वयन नहीं किया गया। इसकी बड़ी वजह ये है कि कंपनियों से फसल बीमा करवाना घाटे का सौदा बनता जा रहा है। राज्यों का कहना है कि वो क्यों न खुद ही मुआवजा बांटें। पंजाब ने तो इस योजना को पहले ही रिजेक्ट कर दिया था। अब मप्र सरकार ने भी अपनी बीमा कंपनी बनाने की घोषणा की है।

इस बार प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के तहत किसानों को उनकी खराब फसल के एवज में कंपनियों द्वारा जो राशि किसानों का दी गई है उससे मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान भी आहत हैं। वह कहते हैं कि बीमा कंपनी खेल खेलती रहती है। खुद सोचिए कि क्या कोई कंपनी घाटे में बीमा करेगी? अगर वो प्रीमियम लेंगे 4000 करोड़ तो देंगे 3000 करोड़। इसलिए अब हम खुद मुआवजा देंगे। दो लेगेंगे तो दो और 10 लगेंगे तो 10 देंगे। काहे की कंपनी। आधी रकम नुकसान पर तुरंत दे देंगे और आधी नुकसान का आंकलन करने के बाद। प्रधानमंत्री से मिलकर इसकी अनुमति लूंगा।

वहीं पूर्व कृषि मंत्री सचिन यादव कहते हैं कि एक तरफ कोरोना महामारी ने किसानों को बर्बाद किया, उसके बाद अतिवृष्टि से फसलें तबाह हुईं और अब फसल बीमा के नाम पर भी मजाक किया जा रहा है। 27 लाख 64 हजार किसानों की फसलों का खरीफ 2019 के लिए 15 हजार 221 करोड़ से अधिक का बीमा करवाया गया, जिसमें से किसानों से 352 करोड़ रुपए से अधिक वसूल किए गए और राज्य शासन की ओर से 509 करोड़ रुपए तत्कालीन कांग्रेस सरकार ने जमा करवाए थे, लेकिन इतनी बड़ी राशि जमा करने के बावजूद किसानों के हाथ में प्रीमियम की तुलना में 100 गुना तक कम राशि आई है।

गौरतलब है कि मप्र कृषि प्रधान राज्य है। प्रदेश में पिछले 15 साल के दौरान कृषि पर सबसे अधिक जोर दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रदेश को फसल उत्पादन में 5 बार कृषि कर्मण अवार्ड मिल चुका है। लेकिन विसंगति यह है कि आज भी प्रदेश का किसान खुशहाल नहीं है। इसकी सबसे बड़ी वजह है प्राकृतिक आपदा से फसलों का नुकसान होना। फसलों के नुकसान की भरपाई के लिए किसान फसल बीमा कराते हैं, लेकिन उसका फायदा उन्हें नहीं मिल पाता है। आलम यह है कि प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का प्रीमियम जमा करने के बाद भी किसानों को प्राकृतिक आपदा से खराब हुई फसल के मुआवजे के लिए दर-दर भटकना पड़ रहा है। अव्वल तो कई बीमा कंपनियां मुआवजा पूरा नहीं देतीं लेकिन वो भी जब समय पर नहीं मिलता तो किसान कर्ज लेकर खेती करने के लिए मजबूर होते हैं। इसकी बड़ी वजह राज्यों की कार्यप्रणाली भी है। दरअसल, देश के 7 बड़े राज्यों ने 2018 से लेकर अब तक कई सीजन में अपने हिस्से का प्रीमियम जमा नहीं किया है। जिसकी वजह से किसान संकट में हैं। केंद्र के पैसे का नुकसान हो रहा है जबकि बीमा कंपनियों को डबल फायदा मिल रहा। ऐसा कारनामा करने वाले कांग्रेस और भाजपा दोनों के शासन वाले राज्य शामिल हैं, जो इन दिनों अपने आपको सबसे बड़ा किसान हितैषी बताने की कोशिश में जुटे हुए हैं।

मप्र कृषि विभाग के एक अधिकारी कहते हैं कि प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना में सार्वजनिक क्षेत्र की 5 और निजी क्षेत्र की 13 कंपनियां पैनल पर हैं। लेकिन सभी कंपनियां हर राज्य और हर मौसम के लिए बोली प्रक्रिया में भाग नहीं लेतीं। वो पहले अपना फायदा देखती हैं। जो ज्यादा जोखिम वाला क्षेत्र है उनमें बीमा नहीं करतीं। स्कीम के कार्यान्वयन के लिए बीमा कंपनियों का चयन संबंधित राज्य सरकारों द्वारा बोली प्रक्रिया के जरिए किया जाता है। राष्ट्रीय किसान महासंघ के संस्थापक सदस्य बिनोद आनंद का कहना है कि जितना पैसा सरकार इन्हें प्रीमियम के रूप में देती है उतना आपदा आने पर किसानों को खुद ही दे दे तो बेहतर होगा।

● **विकास दुबे**

हजारों करोड़ के दावे बाकी

किसान नेताओं का कहना है कि बीमा कंपनियां किसानों को मुआवजे के लिए भटकाती रहती हैं इसलिए ज्यादातर किसान उनके दुष्चक्र में फंसने से अब बच रहे हैं। आपदा के वक्त किसानों को रक्षा कवच देने के लिए बीमा कंपनियों को हर साल प्रीमियम दिया जाता है। साल 2016-17 में 74 लाख से ज्यादा किसानों को बीमित किया गया जिसकी एवज में 3804 करोड़ रुपए प्रीमियम जमा हुआ, लेकिन क्लेम का दावा सिर्फ 2039 करोड़ हुआ। इसी तरह साल 2018-19 में 73 लाख से ज्यादा किसानों को बीमा कवर दिया गया, जिसकी एवज में 5588 करोड़ प्रीमियम जमा हुआ लेकिन क्लेम का दावा सिर्फ 812 करोड़ रुपए ही हुआ। साल 2019-20 में 35 लाख से ज्यादा किसान बीमित हुए और प्रीमियम की राशि 2345 करोड़ रुपए जमा की गई लेकिन क्लेम का दावा अभी भी बाकी है। राष्ट्रीय किसान मजदूर संघ के अध्यक्ष शिवकुमार शर्मा (कक्काजी) कहते हैं कि कहने को तो यह योजना प्राकृतिक आपदा और बीमारी से फसलों की बर्बादी की भरपाई के लिए है, मगर इसमें इतने झोल और पेंच हैं कि इसका लाभ लेने में किसानों के जूते घिस जाते हैं। इसीलिए इस पर लगातार सवाल उठाए जा रहे हैं।

कागजों में कुपोषण से जंग

मप्र में कुपोषण एक ऐसा कलंक है, जिसे खत्म करने के लिए सरकार हर साल हजारों करोड़ रुपए खर्च करती है, लेकिन कुपोषण रुकने का नाम नहीं ले रहा है। इसकी मुख्य वजह यह है कि कागजों में ही कुपोषण से जंग लड़ी जा रही है। इस कारण सरकार की योजनाओं का लाभ जरूरतमंदों तक नहीं पहुंच पा रहा है। इससे कुपोषण के मामले घटने की बजाय बढ़ रहे हैं। किसी देश का भविष्य कैसा होगा, यह उसके बच्चों के भविष्य पर निर्भर होता है। लेकिन जब विकास का आधार ही कुपोषित हो तो सोचिए वह देश के भविष्य में कितना योगदान देगा। क्या होगा, जब देश के लगभग 58 फीसदी नौनिहालों (6 से 23 माह के बच्चों) को पूरा आहार ही न मिलता हो और जब 79 फीसदी के भोजन में विविधता की कमी हो। कैसे पूरे होंगे, उनके सपने जब लगभग 94 फीसदी के भोजन में विकास के लिए जरूरी पोषक तत्व ही न हो। यह दुखद और चिंताजनक आंकड़ें भारत सरकार द्वारा किए गए राष्ट्रीय पोषण सर्वेक्षण (2016-18) में सामने आए थे।

मप्र के आदिवासी अंचलों में तो स्थिति सबसे अधिक खराब है। सरकार की लाख कोशिश के बावजूद अफसर कागजों में कुपोषण के खिलाफ जंग लड़ रहे हैं। प्रदेश में 40 हजार से ज्यादा कुपोषित बच्चे हैं। अधिकारी इन दिनों सुपोषण अभियान भी चला रहे हैं। मैदानी अधिकारियों के पेंच कसे जा रहे हैं। बच्चों को एनआरसी सेंटरों तक लाने में फोकस किया जा रहा है लेकिन मैदानी हकीकत एकदम अलग हैं। कोरोनाकाल में मैदानी अधिकारियों ने भी कुपोषित बच्चों से दूरियां बना ली। स्थिति यह है कि पिछले चार माह में जिला अस्पतालों सहित ब्लॉकों में संचालित पोषण पुनर्वास केंद्र में कुपोषित बच्चों को भर्ती ही नहीं कराया गया।

पोषण पुनर्वास केंद्रों में बच्चों को भर्ती न होने पर अधिकारी अब परिजनों द्वारा न भेजने की दलील दी जा रही है। महिला बाल विकास विभाग का कहना है कि कोरोना के चलते परिजन बच्चों को भेजना नहीं चाह रहे हैं लेकिन मैदानी अमला परिजनों को यह समझा नहीं पा रहा है कि पोषण पुर्नवास केंद्र में कुपोषित बच्चों के लिए हर प्रकार की सुविधा मौजूद है व कोरोना संक्रमण के बीच कोई खतरा नहीं है। इसके बावजूद भी पुनर्वास केंद्रों पर बच्चों को भर्ती नहीं किया जा रहा है। वहीं पब्लिक हेल्थ फाउंडेशन ऑफ इंडिया, आईसीएमआर और नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूट्रेशन की ओर से कुपोषण पर जारी एक रिपोर्ट के मुताबिक, देश में कम वजन वाले बच्चों के जन्म की दर 21.4 फीसदी है। जबकि जिन बच्चों का विकास नहीं हो रहा है, उनकी संख्या 39.3 फीसदी, जल्दी थक जाने वाले बच्चों की संख्या 15.7 फीसदी, कम वजनी बच्चों की संख्या 32.7 फीसदी, अनीमिया पीड़ित बच्चों की संख्या 59.7 फीसदी, 15 से 49 साल की अनीमिया पीड़ित महिलाओं की संख्या 59.7 फीसदी और अधिक वजनी बच्चों की संख्या 11.5 फीसदी पाई गई है।

हालांकि पांच साल से कम उम्र के बच्चों की मौत के कुल मामलों में 1990 के मुकाबले 2019 में कमी आई है। 1990 में यह दर 2336 प्रति एक लाख थी, जो 2019 में 801 पर पहुंच गई है, लेकिन कुपोषण से होने वाली मौतों के मामले में मामूली सा अंतर आया है। 1990 में यह दर 70.4 फीसदी थी जो कि 2019 में 2.2 फीसदी घटकर, 68.2 पर ही पहुंच पाई है। यह चिंता का एक बड़ा विषय है, क्योंकि इससे पता चलता है कि पिछले सालों में किए जा रहे अनगिनत प्रयासों के बावजूद देश में कुपोषण का खतरा कम नहीं हुआ है। इससे निपटने के लिए समय-समय पर अनगिनत सरकारी योजनाएं चलाई गई हैं। जिससे इस बीमारी को समाज से दूर किया जा सके। सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) ऐसी ही एक पहल थी, जिसका लक्ष्य देश के गरीब तबके को सस्ती दर पर भोजन मुहैया कराना था। देश में पीडीएस सबसे बड़ी कल्याणकारी योजना है, जो गरीब परिवारों को रियायती दर पर खाद्यान्न उपलब्ध कराती है।

जर्नल बीएमसी में छपे इस शोध में यह जानने का प्रयास किया गया है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) गरीब तबके के बच्चों में स्टंटिंग और कुपोषण की समस्या को हल करने में कितनी कामयाब हुई है। शोध से पता चला है कि देश में जो गरीब तबका पीडीएस से बाहर है उस वर्ग के बच्चों में कुपोषण की दर सबसे ज्यादा है। यह शोध राष्ट्रीय परिवार और स्वास्थ्य सर्वेक्षण-4 (एनएफएचएस-4) के आंकड़ों पर आधारित है।

● **रजनीकांत पारे**

पीडीएस के तहत अनाज वितरण में खामी

गरीबी, कुपोषण और पीडीएस के बीच के संबंध को समझने के लिए सभी परिवारों को चार वर्गों में बांटा गया है। पहला वह वर्ग है जिसे वास्तविक गरीब कहा गया है जो आर्थिक रूप से गरीब है और जिनके पास बीपीएल कार्ड है। दूसरा वह वर्ग है जो गरीब तो है पर उसके पास बीपीएल कार्ड नहीं है। तीसरा वह वर्ग है जो आर्थिक रूप से समृद्ध है इसके बावजूद उसके पास बीपीएल कार्ड है। चौथा वह वर्ग है जो न तो गरीब है न ही उसके पास योजनाओं का लाभ उठाने के लिए बीपीएल कार्ड है। शोध से प्राप्त नतीजों के अनुसार वह वर्ग जो वास्तविकता में गरीब है और जिसके पास बीपीएल कार्ड भी है उसके और दूसरा वर्ग जो गरीब है पर उसके पास बीपीएल कार्ड नहीं है उस वर्ग के करीब आधे बच्चे कुपोषण का शिकार हैं। वहीं दूसरी ओर जो वर्ग आर्थिक रूप से समृद्ध है और जिसके पास बीपीएल कार्ड है उसके करीब 40 फीसदी बच्चे कुपोषित हैं। जबकि आर्थिक रूप से संपन्न वर्ग जिसके पास कार्ड नहीं है उसके करीब एक तिहाई से कम बच्चे कुपोषण का शिकार हैं।

कैसे होगा बाघों का संरक्षण

मप्र देश का सबसे अधिक वन वाला राज्य तो है ही यहां सबसे अधिक बाघ भी हैं। प्रदेश में बाघों की आबादी तेजी से बढ़ रही है। इसका असर वनक्षेत्रों में रहने वाले अन्य प्राणियों के साथ ही बाघों पर भी पड़ रहा है। क्षेत्रफल कम होने के कारण बाघों के बीच टेरेटरी को लेकर जानलेवा लड़ाई हो रही है। इस कारण लगभग हर माह कोई न कोई बाघ मौत के मुंह में समा रहा है। यही नहीं बाघ वन क्षेत्र से निकलकर रहवासी क्षेत्र में भी पहुंच रहे हैं। इससे कई दुर्घटनाएं भी हो चुकी हैं। इस समस्या से निजात पाने के लिए प्रदेश में नए अभयारण्य बनाने की तैयारी की जा रही थी, लेकिन यह प्रस्ताव ठंडे बस्ते में चला गया है।

गौरतलब है कि टाइगर स्टेट का तमगा मिलने के बाद प्रदेश में शुरू हुई 11 नए अभयारण्यों के गठन की प्रक्रिया पर पूर्ण विराम लग गया है। राज्य सरकार ने नए अभयारण्यों की जरूरत को सिरे से खारिज करते हुए इस प्रक्रिया को रोक दिया है। इनमें से पांच अभयारण्यों के प्रस्ताव कैबिनेट की मंजूरी के लिए जा चुके थे तो शेष छह अभयारण्यों के प्रस्ताव भी लगभग तैयार थे। पिछले दिनों वनमंत्री विजय शाह ने साफ कहा है कि प्रदेश में कोई नया अभयारण्य नहीं खोला जाएगा। 8 साल के अथक प्रयास के बाद प्रदेश दोबारा टाइगर स्टेट बना है। वर्ष 2018 के बाघ आंकलन (टाइगर एस्टीमेशन) में प्रदेश 526 संख्या के साथ देश में पहले स्थान पर रहा है। इसके साथ ही सरकार की जिम्मेदारी भी बढ़ी है।

विशेषज्ञों ने साफ कहा था कि बाघों की संख्या बढ़ने का मतलब है, ज्यादा निगरानी और बाघों के लिए नए क्षेत्रों का विकास। इसी सलाह पर पूर्ववर्ती कमलनाथ सरकार ने 11 नए अभयारण्यों के गठन का प्रस्ताव तैयार किया था। नाथ सरकार अभयारण्यों के गठन पर आखिरी फैसला ले पाती, इससे पहले ही सरकार गिर गई। हालांकि शिवराज सरकार ने पहले दिन से ही इसे प्राथमिकता में नहीं रखा। बाघ आंकलन की रिपोर्ट 2019 में आई थी, तभी विशेषज्ञों ने कहा था कि प्रदेश के नेशनल पार्क और अभयारण्यों में बाघ क्षमता से अधिक हो गए हैं। ऐसे में नए क्षेत्र तैयार करने होंगे। बांधवगढ़ टाइगर रिजर्व में बीते 9 महीने में घटी घटनाओं ने विशेषज्ञों की आशंका को सही साबित किया है।

ऐसी घटनाएं दूसरे इलाकों में भी घटी हैं। पार्क के बफर क्षेत्र में बाघों ने आधा दर्जन ग्रामीणों को मौत के घाट उतार डाला है। यदि बांधवगढ़ की ही बात करें तो वहां क्षमता 70 बाघों की है और वर्तमान में 124 हैं। इस कारण बाघ बफर क्षेत्र से बाहर निकलकर नजदीक के गांव तक पहुंच रहे हैं। नए अभयारण्यों का गठन सिर्फ बाघों की सुरक्षा के लिए ही नहीं था, बल्कि सरकार को पर्यटन बढ़ाकर आमदनी भी बढ़ानी थी। वर्तमान में प्रदेश में 11 नेशनल पार्क और 24 अभयारण्य हैं, जिनसे हर साल औसतन 27 करोड़ रुपए राजस्व मिलता है। तत्कालीन सरकार ने इसे 200 करोड़ रुपए तक ले जाने का लक्ष्य रखा था। लेकिन अभी यह प्रस्ताव मझधार में है। उधर, प्रदेश के वन क्षेत्रों में बाघों की आपसी लड़ाई आम बात हो गई है। इससे बाघों के संरक्षण पर सवाल उठने लगा है।

गौरतलब है कि मप्र के वनक्षेत्र पहले से ही असुरक्षित रहे हैं। यहां वनक्षेत्रों में वन्य जीवों की तस्करी निरंतर होती रहती है। प्रदेश के 10 नेशनल पार्क तथा 25 अभयारण्यों के आसपास स्थित ऐसे फार्म हाउस और रिसोर्ट तस्करों का अड्डा बने हुए हैं। वन विभाग-नेशनल पार्क के अफसरों, सफेदपोश लोगों, स्थानीय प्रशासन और तस्करों के गठजोड़ से मप्र में हर साल वन्य जीव तस्करी का अवैध कारोबार सैकड़ों करोड़ रुपए का है।

मप्र में होने वाले वन्यजीव तस्करी की बात करें तो पिछले डेढ़ दशक में यहां यह अवैध कारोबार तेजी से पनपा है। आज विश्व में वन्य जीव तस्करी का अवैध कारोबार 30,000 करोड़ डॉलर से अधिक है, जो अब मादक पदार्थों के कारोबार से कुछ ही कम और हथियारों के **कारोबार के तो करीब ही पहुंच चुका है।** सौंदर्य प्रसाधनों, औषधि निर्माण, तो कहीं घरों की सजावट के लिए वन्य जीव के अंगों की बेतहाशा मांग और अंतरराष्ट्रीय बाजार में मिलता मुंह मांगा दाम इसके प्रमुख कारण हैं। यही कारण है कि पिछले डेढ़ दशक में मप्र में वन्य जीवों की तस्करी बड़े पैमाने पर हो रही है। यह वन्य जीवों के लिए बड़े खतरे का संकेत है।

● **श्याम सिंह सिकरवार**

मप्र में सबसे बड़ा वनक्षेत्र

मप्र में वन्य-जीव संरक्षित क्षेत्र 10989.247 वर्ग किलोमीटर में फैला है, जो देश के दर्जन भर राज्य और केंद्र शासित राज्यों के वन क्षेत्रों से भी बड़ा है। मप्र में 94 हजार 689 वर्ग किलोमीटर में वन क्षेत्र हैं। यहां 10 राष्ट्रीय उद्यान और 25 वन्य-प्राणी अभयारण्य हैं, जो विविधता से भरपूर है। कान्हा, बांधवगढ़, पन्ना, पेंच, सतपुड़ा एवं संजय राष्ट्रीय उद्यान को टाइगर रिजर्व का दर्जा प्राप्त है। वहीं करेरा (गुना) और घाटीगांव (ग्वालियर) विलुप्तप्राय दुर्लभ पक्षी सोनचिड़िया के संरक्षण के लिए, सैलाना (रतलाम) और सरदारपुर (धार) एक अन्य विलुप्तप्राय दुर्लभ पक्षी खरमोर के संरक्षण के लिए और 3 अभयारण्य-चंबल, केन एवं सोन घड़ियाल और अन्य जलीय प्राणियों के संरक्षण के लिए स्थापित किए गए हैं। अपनी स्थापना के समय से ही ये नेशनल पार्क और अभयारण्य रसूखदारों और तस्करों के लिए आकर्षण का केंद्र बने हुए है। यही कारण है कि इनके भीतर स्थित गांवों को जहां बाहर किया जा रहा है, वहीं इनके आसपास फार्म हाउस और रिसार्ट बड़ी तेजी से बने हैं। जानकार बताते हैं कि जब नेशनल पार्क तथा अभयारण्यों के आसपास फार्म हाउस और रिसोर्ट बढ़ने लग तबसे प्रदेश में वन्य प्राणियों के शिकार के मामले भी बढ़ गए। इस कारण वर्ष 2006 में मप्र से टाइगर स्टेट का दर्जा छिन गया था। हालांकि प्रदेश को एक बार फिर टाइगर स्टेट का दर्जा मिल गया है, लेकिन बाघों के संरक्षण के लिए कोई बड़ी तैयारी नहीं की गई है।

भगीरथ बनी जल सहेलियां

जीवन के लिए पानी के क्या मायने होते हैं, सूखे से जूझ रहे बुंदेलखंड की महिलाओं से बेहतर यह कौन जान सकता है। होश संभालते ही बेटियां हैंडपंपों पर तड़के से ही कतार लगाकर खड़ी हो जाती हैं। सिर पर सूरज आने तक यही पानी ढोने का क्रम चलता है। कई बच्चियों का स्कूल पानी भरने की जिम्मेदारी की भेंट चढ़ जाता है। पानी लेने के लिए नंबर लगाने को लेकर विवाद भी इसी जद्दोजहद का हिस्सा है। मप्र में छतरपुर जिले के अंगरोठा गांव की महिलाओं ने गर्मियों में पैदा होने वाले भीषण संकट को हमेशा-हमेशा के लिए खत्म करने का संकल्प लिया। इस लक्ष्य को एक पहाड़ काटकर हकीकत में बदला। महिलाओं का नेतृत्व करने वाली 19 साल की बबीता आजकल सुर्खियों की सरताज है। उसके प्रयासों से भावी पीढ़ियों का जल संकट खत्म हुआ है।

सही मायनो में सूखे बुंदेलखंड में पानी के स्थायी समाधान के लिए महिलाओं ने अथक प्रयास किए हैं। प्रत्येक गांव में पच्चीस-पच्चीस महिलाओं की पानी पंचायत बनाई गई है, महिला सदस्य जल संरचनाओं के निर्माण व रखरखाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उन्हें सम्मान से जल सहेलियां कहकर बुलाया जाता है। सही मायनो में ये जल सहेलियां बुंदेलखंड के लिए भगीरथ बन गई हैं। छतरपुर के अंगरोठा गांव में आसपास की पंचायतों की 400 से अधिक महिलाओं ने पहाड़ को काटने के संकल्प को हकीकत में बदला। पहाड़ के करीब 350 फीट हिस्से को काटकर एक ऐसी नहर बनाई गई, जिससे पहाड़ों का बरसाती पानी गांव के बड़े तालाब में भरने लगा। इसके साथ ही बरसाती बछेड़ी नदी को भी नया जीवन मिला। दरअसल, बुंदेलखंड में जल संरचनाओं को गढ़ने के जो भगीरथ प्रयास हुए हैं, अंगरोठा भी उसी कड़ी का हिस्सा है। निसंदेह जल संकट की त्रासदी महिलाएं ही झेलती हैं, इसीलिए उन्होंने नई जल संरचना के निर्माण का बीड़ा उठाया।

दरअसल, गंभीर संकट से जूझते बुंदेलखंड को यूपीए सरकार के दूसरे कार्यकाल में जो साढ़े तीन हजार करोड़ का पैकेज दिया गया था, उसका लक्ष्य सूखे को खत्म करके क्षेत्र से पलायन रोकना भी था। इस योजना के तहत अंगरोठा में चालीस एकड़ का तालाब बनाया गया था जो जंगल से तो जुड़ा था मगर यहां पानी आने का रास्ता बीच में एक पहाड़ आने से अवरुद्ध था। बड़े इलाके का पानी बछेड़ी नदी से होकर निकल जाता था। स्थायी जल स्रोत न होने से यह तालाब बरसात के बाद सूख जाता था। शेष महीनों में गांव में जलसंकट बना रहता था। गांव की महिलाओं ने क्षेत्र में सक्रिय समाजसेवी संस्था व जल जोड़ो अभियान के सहयोग से इस भगीरथ प्रयास को अमलीजामा पहनाने का संकल्प लिया। पहाड़ को काटकर नहर को तालाब से जोड़ दिया गया। इस अभियान को नेतृत्व देने वाली बबीता राजपूत कहना है कि केवल अंगरोठा की ही नहीं, निकटवर्ती कई गांवों की महिलाएं कई किलोमीटर पैदल चलकर श्रमदान के लिए आती थीं। पहले मनरेगा के तहत कार्य करवाने का विचार आया लेकिन महिलाओं ने खुद ही संकल्प को पूरा किया। करीब डेढ़ साल की अथक मेहनत से जीवनधारा गांव तक पहुंची। पहाड़ में विद्यमान ग्रेनाइट के पत्थरों को हटाना एक बड़ी बाधा थी, जिन्हें काटने के लिए मशीनों की भी मदद ली गई। इतना ही नहीं, इस काम में जितने पेड़ काटे गए, उसी संख्या में महिलाओं ने नए पौधे भी लगाए ताकि पर्यावरण संतुलन बना रहे। बबीता बताती है कि इस प्रयास से जहां गांव का तालाब लबालब भर गया, वहीं गांव में भूजल का स्तर भी समृद्ध हुआ है। साथ ही मरणासन्न बरसाती बछेड़ी नदी को नया जीवन मिल गया, जो सदानीर बनी रहेगी।

दरअसल, बबीता के नेतृत्व में महिलाओं ने वर्षा जल सहेजकर गांव की दशा सुधारकर समृद्धि की दिशा बदल दी है। जल जोड़ो अभियान के अनुसार तालाब में सत्तर एकड़ तक पानी भर रहा है। भूजल स्तर में वृद्धि से सूखे कुएं भी जीवंत हुए हैं और हैंडपंप भी कम गहराई में पानी दे रहे हैं। पशु धन के लिए भी अब पानी का संकट नहीं रहा। अब खेती में समृद्धि की संभावनाएं हकीकत बन गई हैं।

बबीता इस बात को स्वीकारती हैं कि यह लक्ष्य हासिल करना सरल कार्य नहीं था। लेकिन क्षेत्र की महिलाएं तन-मन से साथ जुटीं और लक्ष्य हकीकत में बदल गया। इसमें उन प्रवासी श्रमिकों की भी भूमिका रही जो कई दिन पैदल चलने के बाद गांव पहुंचते थे। इस काम में जल जोड़ो अभियान के संयोजक मानवेंद्र का मार्गदर्शन लगातार मिलता रहा। इस अभियान को लॉकडाउन के दौरान अंजाम दिया गया। जिससे इस पठारी क्षेत्र के सूखे खेत अब सोना उगलने को तैयार हो गए हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि अब पानी के कारण गांव-घर छोड़ने की प्रवृत्ति पर रोक लग सकेगी।

● **सिद्धार्थ पांडे**

40 एकड़ के तालाब में भर गया 70 एकड़ तक पानी

जल जोड़ो अभियान के राज्य संयोजक मानवेंद्र सिंह बताते हैं कि ग्राम भेलदा में पहाड़ों के जरिए बरसात का पानी बहकर निकल जाता था। इस पानी को सहेजकर महिलाओं ने गांव की दशा और दिशा बदलकर रख दी है। अब इस 40 एकड़ के तालाब में लगभग 70 एकड़ तक पानी भर रहा है। सूखे कुओं में पानी आ चुका है, हैंडपंप भी दोबारा पानी देने लगे हैं। किसान अब कृषि के सुनहरे भविष्य की कल्पना कर रहे हैं।

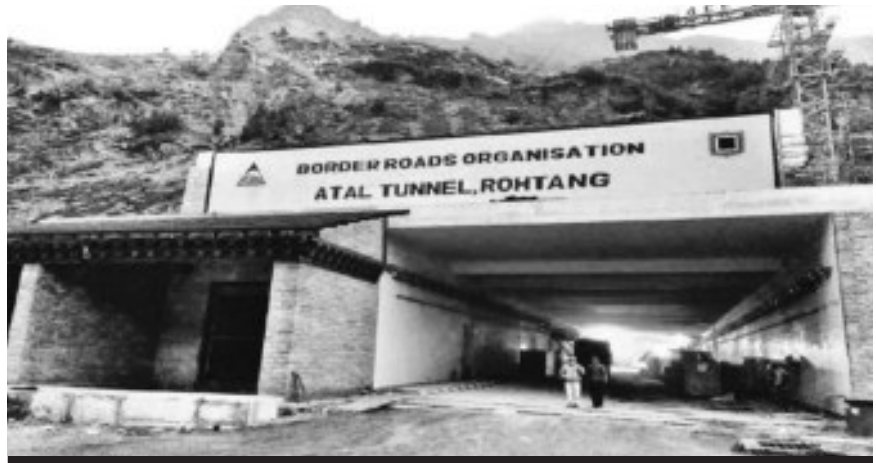

सुरक्षा की सुरंग

जिस टनल का सपना पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने देखा, अटल बिहारी वाजपेयी ने मंजूरी दी, सोनिया गांधी ने आधारशिला रखी उसका प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 3 अक्टूबर को उद्घाटन किया। वक्त कुछ लंबा खिंचा; लेकिन लद्दाख के लिए सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अटल टनल अब हिमाचल के रोहतांग में बनकर तैयार है। चीन के साथ सैन्य तनाव के बीच इस सुरंग का बनकर तैयार होना भारतीय सेना के लिए एक सुखद खबर है। भले यह सुरंग नागरिक इस्तेमाल के लिए भी है, इमरजेंसी में रसद लेह-लद्दाख ले जाने के लिए भारतीय सुरक्षा बलों को अब एक कम दूरी वाला मार्ग मिल गया है। यह इसलिए भी बहुत महत्वपूर्ण है कि बर्फबारी में यह रास्ता पहले महीनों बंद रहता था, लेकिन अब सालभर खुला रहेगा। जाहिर है कि आम जनता के लिए भी जिंदगी यहां सुगम होने जा रही है।

पिछले साल के आखिर में प्रधानमंत्री मोदी ने अटल बिहारी वाजपेयी की 95वीं जयंती के अवसर पर घोषणा की थी कि इस सुरंग का नाम अटल सुरंग होगा। करीब 9.02 किलोमीटर लंबी 3000 मीटर की ऊंचाई पर बनी यह सुरंग दुनिया की सबसे लंबी सुरंग है। प्रधानमंत्री मोदी ने अब इसे राष्ट्र को समर्पित कर दिया। सुरंग बनने से सभी मौसम में लाहुल स्पीति घाटी के सुदूर इलाकों में संपर्क सुगम हो गया। यही नहीं इस सुरंग के शुरू होने से मनाली और लेह के बीच की दूरी 46 किलोमीटर कम हो गई है। यह आम जनता ही नहीं सेना के लिए भी बहुत लाभकारी है।

रोहतांग दर्रे के नीचे रणनीतिक रूप से अहम एक सुरंग बनाने की कल्पना इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्री रहते ही कर ली गई थी। इसे मंजूरी मिली सन् 2000 में, जब अटल बिहारी देश के प्रधानमंत्री थे। वाजपेयी ने सुंरग के दक्षिणी हिस्से को जोड़ने वाली सड़क की आधारशिला 26 मई, 2002 को रखी। इसके बाद जब कांग्रेस के नेतृत्व वाली यूपीए की सरकार बनी तो 2010 में सुरंग की भी आधारशिला रख दी गई। यह आधारशिला यूपीए की अध्यक्ष सोनिया गांधी ने रखी, जिसके बाद सुरंग का निर्माण शुरू हो गया। तब इस सुरंग की अनुमानित लागत राशि 1500 करोड़ रुपए थी और इसे 2015 तक तैयार करने का लक्ष्य रखा गया था। हालांकि बीच में कई तरह की अड़चनें आने से इसका लक्ष्य आगे खिसक गया। अड़चन का सबसे बड़ा कारण था, सेरी नाले में रिसाव होना। इसके चलते इंजीनियरों ने यह लक्ष्य पांच साल आगे बढ़ा दिया। बनते-बनते इसकी लागत भी बढ़कर करीब 3500 करोड़ रुपए पहुंच गई।

यही नहीं, शुरू में इसकी लंबाई भी 8.8 किलोमीटर थी, जो अब 9.02 किलोमीटर हो गई है। इसका कारण सुरंग के दोनों छोर पर एवलांच विरोधी सुरंग बनना है। इसके कारण सुरंग की लंबाई 220 मीटर बढ़ गई है। अर्थात् पहले यह 8800 मीटर लंबी थी, जबकि अब यह 9020 मीटर लंबी हो गई है। यह क्षेत्र सड़क और पुल के लिहाज से सीमा सड़क संगठन (बीआरओ) के तहत है। हाल में बीआरओ के बड़े अधिकारी सुरंग के निर्माण के तमाम पहलुओं का जायजा ले चुके हैं। बीआरओ के डीजी लेफ्टिनेंट जनरल हरपाल सिंह कहते हैं कि केंद्र सरकार की मदद से बीआरओ ने समय-समय पर जरूरी सामान उपलब्ध कराया है। सभी के सहयोग से कार्य समय पर पूरा हुआ है। देश के लिए यह सुरंग एक बहुत महत्वपूर्ण प्रोजेक्ट है। निश्चित ही अटल सुरंग के निर्माण के रूप में बीआरओ के नाम एक ओर बड़ी उपलब्धि जुड़ने जा रही है। बीआरओ के खाते में इतनी उपलब्धियां हैं, जिनकी गिनती करना भी मुश्किल है। बीआरओ के रोहतांग सुरंग परियोजना के चीफ इंजीनियर केपी पुरशोथमन ने बताया कि बीआरओ ने अधिकतर कार्य पूरा करने में सफलता पाई है। सुरंग के नॉर्थ पोर्टल सहित दारचा में भव्य पुल बनकर तैयार है।

पूर्वी पीर पंजाल की पर्वत श्रृंखला में बनी 9.02 किलोमीटर लंबी यह सुरंग लेह-मनाली राजमार्ग पर है। यह करीब 10.5 मीटर चौड़ी और 5.52 मीटर ऊंची है। सीमा सड़क संगठन ने साल 2009 में शापूरजी पोलोनजी समूह की कंपनी एफकॉन और ऑस्ट्रिया की कंपनी स्टारबैग के संयुक्त उपक्रम को इस टनल के निर्माण का ठेका दिया। सुरंग का निर्माण किस कदर बड़े पैमाने पर था, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि एफकॉन ने इस सुरंग के निर्माण में करीब 150 इंजीनियरों और एक हजार श्रमिकों को लगाया। एफकॉन के हाइड्रो एंड अंडरग्राउंड बिजनेस निदेशक सतीश परेटकर ने कहा कि यह सुरंग घोड़े के नाल के आकार की है और इसने भारत के इंजीनियरिंग इतिहास में कई कीर्तिमान रचे हैं। इसमें बहुत से ऐसे काम हैं, जो सुरंग के लिहाज से देश में पहली बार हुए हैं।

बता दें अटल सुरंग में डबल लेन सड़क होगी। समुद्र तल से करीब 10 हजार फीट की ऊंचाई पर बनी दुनिया की सबसे लंबी वाहन योग्य सुरंग है। यह देश की पहली ऐसी सुरंग होगी, जिसमें मुख्य सुरंग के भीतर ही बचाव सुरंग भी बनाई गई है। इससे महत्व को समझा जा सकता है। परेटकर के मुताबिक, यह पहली ऐसी सुरंग है, जिसमें रोवा फ्लायर टेक्नोलॉजी का उपयोग किया गया है।

● **धर्मेन्द्र सिंह कथूरिया**

अपनी तरह की अनोखी सुरंग

यह सुरंग कई मायनों में अनोखी है। इसमें प्रत्येक 150 मीटर की दूरी पर टेलीफोन लगे हैं। प्रत्येक 60 मीटर की दूरी पर अग्निरोधी यंत्र हैं जबकि हर 250 मीटर की दूरी पर ऑटोमैटिक इंसिडेंट डिटेक्टिव सिस्टम के साथ सीसीटीवी कैमरे लगे हैं। हर एक किलोमीटर के बाद हवा की गुणवत्ता बताने वाले मॉनिटर लगाए हैं तो हर 500 मीटर पर आपातकालीन निकास द्वार हैं। प्रत्येक 2.2 किलोमीटर पर गुफानुमा मोड़ हैं, ताकि बीच में ही आपको वापस मुड़ना हो तो ऐसा कर सकते हैं। इसके अलावा मनाली की तरफ से सुरंग तक पहुंचने के लिए स्नो गैलरी बनी है। सुरंग शुरू होने से पूरा साल मनाली को कनेक्टिविटी मिलती रहेगी। सुरंग के भीतर इमरजेंसी एग्जिट का निर्माण भी किया गया है। सुरंग के भीतर अधिकतम 80 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार हो सकती है। इसमें से हर रोज करीब 1,500 ट्रक और 3,000 कारें गुजर सकेंगी।

अस्तित्व का महासंग्राम

मप्र में 28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव को भाजपा और कांग्रेस के अस्तित्व का चुनाव कहा जा रहा है। शायद यही वजह है कि इस चुनाव में राजनीतिक पार्टियों के नेताओं ने मर्यादा की सारी हदें पार कर ली हैं। जैसे-जैसे हम विकसित और प्रगतिशील होते जा हैं, वैसे-वैसे ही शब्दों की मर्यादाएं भंग होती जा रही हैं। आए दिन राजनीति में इस तरह की भाषा सुनने को मिलती है जो कहीं ना कहीं यह बताती है कि अब राजनीति में मर्यादा न केवल तार-तार हो रही है बल्कि विपक्षी पर इल्जाम लगाने के लिए असंसदीय भाषा तक का प्रयोग किया जा रहा है।

● राजेंद्र आगाल

मप्र की 28 विधानसभा सीटों पर हो रहा उपचुनाव किसी महासंग्राम से कम नहीं है। इस उपचुनाव को महाभारत और रामायण के युद्धों की तरह लड़ा जा रहा है। महाभारत की तरह इस उपचुनाव में साम-दाम-दंड-भेद दिख रहा है, वहीं रामायण की तरह छल-कपट और कूटनीति का सहारा लिया जा रहा है। ऐसा इसलिए हो रहा है कि यह उपचुनाव पार्टियों के अस्तित्व का चुनाव है। मप्र के **इतिहास में इससे पहले इतनी अधिक** सीटों पर उपचुनाव नहीं हुए हैं। पहले जब भी उपचुनाव होते थे तो उससे सरकार पर कोई असर नहीं पड़ता था। लेकिन इस उपचुनाव का सरकार पर असर पड़ना है। इसलिए इस चुनाव में मर्यादाएं तार-तार करने में भी नेता हिचक नहीं रहे हैं। एक-दूसरे को घेरने के लिए ऐसे-ऐसे शब्दों का प्रयोग हो रहा है, जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है। अगर इसे राजनीति के पतन की **पराकाष्ठा** कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

उपचुनाव वाले क्षेत्रों में मतदाताओं को आकर्षित करने के लिए हर तरह के नाटक और नौटंकी देखने को मिल रही है। कोई घुटने टेकने में भी नहीं हिचक रहा है तो कोई मजदूरों के सामने साष्टांग हो रहा है। जो नेता कभी सर्वसुविधा कक्ष से बाहर नहीं आते थे, वे भीड़ में जाने से भी परहेज नहीं कर रहे हैं। राजनीतिक अस्तित्व के इस महासंग्राम में मतदाताओं को रिझाने के साथ ही एक-दूसरे को नीचा दिखाने की भरपूर कोशिश हो रही है।

वादे खूब, विकास गया डूब

अगर पिछले कुछ सालों का विश्लेषण करें तो यह बात सामने आती है कि हर चुनाव में नेता बड़े-बड़े वादे करके जनता को लुभाते हैं और सत्ता पाते ही विकास को भूल जाते हैं। 2003 में उमा भारती के नेतृत्व में भाजपा ने संगठित होकर दिग्विजय सिंह और कांग्रेस के खिलाफ चुनाव लड़ा था। उस समय भाजपा ने बीएसपी (बिजली, सड़क, पानी) को मुद्दा बनाकर चुनाव लड़ा। **भाजपा सत्ता में** आई तो उमा भारती मुख्यमंत्री बनीं। जनता को उम्मीद थी कि अब प्रदेश की तस्वीर और तकदीर बदलेगी। लेकिन प्रदेश का विकास करने की बजाय उमा भारती पार्टी की अंदरूनी लड़ाई से निपटने में लगी रहीं। इसका परिणाम यह हुआ कि हुगली में तिरंगे के अपमान के मामले में उन्हें मुख्यमंत्री की कुर्सी छोड़नी पड़ी। उसके बाद बाबूलाल गौर मुख्यमंत्री बने। वे मुख्यमंत्री के तौर पर भोपाल के बाहर के बारे में सोच भी नहीं पाए थे कि उन्हें भी चलता कर दिया गया। उसके बाद शिवराज सिंह चौहान मुख्यमंत्री बने। पांव-पांव वाले **भैया के रूप में** ख्यात शिवराज सिंह जब मुख्यमंत्री बने तो लोगों को उम्मीद जगी कि प्रदेश में विकास की गंगा बहेगी। उन्होंने लोगों की भावनाओं का ख्याल रखते हुए विकास कार्यों के घोषणाओं का पहाड़ खड़ा कर दिया। वह पहाड़ इतना बड़ा हो गया कि आज तक वह उनके लिए उपहास का कारण बना हुआ है।

जनता मांग रही हिसाब

उपचुनाव में एक तस्वीर यह भी देखने को मिल रही है कि चुनावी सभा में पहुंचने वाली जनता सवाल उठा रही है कि हम उन्हीं नेताओं को कैसे वोट दें, जिन्होंने 35 करोड़ में हमारे वोट को बेच दिया। दरअसल, जिन 25 कांग्रेसी विधायकों ने अपनी विधायकी से इस्तीफा देकर भाजपा का दामन थामा है और अब उसी के चुनाव चिन्ह पर चुनाव लड़ रहे हैं, उनके बारे में कहा जा रहा है कि उन्होंने 35 करोड़ रुपए लेकर पार्टी बदली है। उपचुनाव से पहले इस बात को आरोप माना जा रहा था, लेकिन जब शिवपुरी जिले की पोहरी विधानसभा सीट से उपचुनाव लड़ रहे भाजपा प्रत्याशी और प्रदेश सरकार में मंत्री सुरेश धाकड़ ने एक चुनावी सभा में ताल ठोककर कहा कि - लोग मुझ पर आरोप लगाते हैं कि मैं गद्दार हूं। यह बात सही है कि मैं बिका, लेकिन मैं आपकी खातिर बिका। मैं बिका लेकिन मैं श्रीमान ज्योतिरादित्य सिंधिया जी के साथ गया। मैं मरता था जिन होठों पर, वो बिकने लगे हैं नोटों पर...' पता नहीं ये लोकगीत विधानसभा उपचुनाव में भाजपा के उस आयातित प्रत्याशी ने सुना था या नहीं, लेकिन भरी सभा में खुद के 'बिकने' की स्वीकारोक्ति और **उसका औचित्य** जिस अंदाज में उसने साबित किया, उसे इक्कीसवीं सदी के 'राज' और 'नीति' शास्त्र का सूत्र वाक्य समझना चाहिए। जाने-अनजाने ही सही, उस प्रत्याशी ने देश की वर्तमान पतनशील राजनीति में नैतिकता की तलहटी पर ईमानदार पोंछा लगाने की कोशिश की। उसने एक गंभीर नैतिक अपराध को 'साध्य' की दृष्टि से जायज ठहराने का ऐसा सार्वजनिक कबूलनामा पेश किया, जो इन उपचुनावों के बाद भी नजीर की तरह बरसों याद रखा जाएगा।

ध्यान रहे कि इन दिनों मप्र की 28 विधानसभा सीटों पर उपचुनाव हो रहे हैं। ये थोक उपचुनाव इसलिए हो रहे हैं, क्योंकि कांग्रेस के **25 विधायकों** ने 8 माह पूर्व भाजपा का दामन थामकर पूर्ववर्ती कमलनाथ सरकार को गिरा दिया था। ये सभी प्रत्याशी अब भगवा दुपट्टे ओढ़कर कमल खिलाने में लगे हैं। चुनावी सभाओं में जनता यह भी सवाल उठा रही है कि ऐसे नेताओं पर कैसे भरोसा किया जाए, जो पैसे के लिए **अपना ईमान बेच** देते हैं। अभी इस मुद्दे पर बहस हो ही रही है कि ग्वालियर जिले की डबरा सीट से उपचुनाव लड़ रहीं प्रदेश की महिला एवं बाल विकास मंत्री इमरती देवी ने यह कहकर सनसनी फैला दी है कि जो विधायक मंत्री नहीं बन पाए थे, उन्हें कमलनाथ हर महीने 5 लाख रुपए देते थे। दोनों नेताओं की इस स्वीकारोक्ति से एक बात तो साफ हो गई है कि सत्ता में कोई भी रहे जनता

कोई घुटने पर, तो कोई साष्टांग

आम दिनों में जनता को दुत्कारने वाले माननीयों की चाल के साथ ही चरित्र भी बदला हुआ नजर आ रहा है। कोई चुनावी मंच पर घुटने टेककर जनता का अभिवादन कर रहा है तो कोई मैले-कुचले कपड़े पहने मजदूरों के सामने साष्टांग होने में तनिक भी हिचक नहीं रहा है। आलम यह है कि मंत्रियों और विधायकों की हालत ऐसी हो गई है कि वे जनता के सामने गिड़गिड़ाते फिर रहे हैं। अभी तक जनता ने गिरगिट को ही रंग बदलते देखा था, लेकिन इस उपचुनाव में यह देखने को मिल रहा है कि नेता गिरगिट से भी अधिक रंग कैसे बदल लेते हैं। दरअसल, 28 विधानसभा सीटों का उपचुनाव दोनों प्रमुख राजनीतिक दलों भाजपा और कांग्रेस के लिए एक तरह से अस्तित्व की लड़ाई बनता रहा है। जाहिर है कि अल्पमत में बैठी सरकार और अपदस्थ हुई कमलनाथ सरकार का भविष्य यही चुनाव तय करेंगे। ये चुनाव ज्योतिरादित्य सिंधिया की नई राजनीतिक पारी का रुख भी तय करेंगे। क्या जनता के बीच अभी भी शिवराज सिंह चौहान की ग्राहता बची है...? क्या कमलनाथ के साथ षड्यंत्र हुआ है और जनता की सहानुभूति उनके साथ है? ये सब निर्णय जनता 10 नवंबर को कर देगी। सभी बड़े नेता शिवराज सिंह चौहान, ज्योतिरादित्य सिंधिया, कमलनाथ, नरेंद्र सिंह तोमर जानते हैं कि ये चुनाव कितना महत्वपूर्ण है। इस बार शायद यही वजह है कि आरोपों में भाषाई मर्यादा बहुत बुरी तरह से ध्वस्त हो रही है। जिस नेता के मुंह में जो आ रहा है वो बोल रहा है। हैरत इस बात की है कि छोटे या मंझोले कहे जाने वाले नेताओं के मुंह से आग नहीं निकल नहीं रही बल्कि उन नेताओं के मुंह से भी निकल रही है जिनके बारे में कहा जाता है कि वे बहुत सोच समझकर बोलते हैं। इसलिए मप्र का यह उपचुनाव देशभर के लिए आकर्षण का केंद्र बना हुआ है। रोजाना कोई न कोई ऐसा वाकया हो जाता है, जो देशभर में सुर्खी बन जाता है।

भूखा-नंगा से हो आई चायवाले की याद

मप्र विधानसभा उपचुनाव में कांग्रेस नेता के भूखा-नंगा वाले बयान से 2014 के लोकसभा चुनाव में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के खिलाफ कांग्रेस पार्टी के नेता मणिशंकर अय्यर के बयान की याद ताजा हो आई है। अय्यर ने उस समय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को चाय वाला बताया था, जिसे भाजपा ने चुनाव में बड़ा मुद्दा बना दिया। लोकसभा चुनाव के बाद भाजपा ने सत्ता हासिल भी कर ली। मप्र में भी कुछ इसी तर्ज पर कांग्रेस की तरफ से शिवराज सिंह चौहान के लिए ऐसा बयान दिया गया है, जिसे भाजपा एक बार फिर कैश कराने में जुट गई है। भाजपा हर मंच पर भूखा-नंगा का जिक्र कर रही है। यही नहीं मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान तो जनता के बीच घुटने टेकने लगे हैं। यह सब देखकर ऐसा लगने लगा है, जैसे चुनावी मंच अब नाटक-नौटंकी के मंच बन गए हैं। कभी चुनावी मंच से जनता के विकास के लिए घोषणाएं होती थीं, अब तो विपक्षी पार्टी के नेताओं की कमियां गिनाई जाती हैं, गड़े मुर्दे उखाड़े जाते हैं। नेता इस बात का सबसे अधिक ध्यान रखते हैं कि उनके भाषणों से लोगों का मनोरंजन हो रहा है कि नहीं। ऐसे में जनसमस्याओं का चुनावी मंचों से जिक्र तक नहीं होता है। एक पार्टी का नेता इस बात के लिए तत्पर रहता है कि कब दूसरी पार्टी का नेता कोई ऐसी बात बोल दे, जिसे मुद्दा बनाकर जनता के बीच परोसा जाए। 28 सीटों पर होने वाले उपचुनाव में राजनीति का यह खेल जमकर खेला जा रहा है और जनता असहाय होकर देख रही है।

की मेहनत की कमाई को नेता जमकर लुटाते हैं। एक तरफ जनता दाने-दाने को मोहताज हो रही है, वहीं दूसरी तरफ नेताओं की **बीसों उंगलियां** घी में डूबी हुई हैं। चुनाव दर चुनाव जनता को विकास के झूठे सपने दिखाकर ठगने का यह सिलसिला कब तक चलेगा?

गद्दार-वफादार की जंग

राजनीतिक वातावरण में उपचुनाव कमलनाथ बनाम ज्योतिरादित्य सिंधिया का फ्लेवर लिए हुए है। लेकिन मुकाबला कमलनाथ और शिवराज के बीच हो गया है। कमलनाथ और कांग्रेस की टीम ज्योतिरादित्य सिंधिया और उनके साथियों को गद्दार बता रही है। कमलनाथ अपनी जनसभा में अपनी डेढ़ साल की सरकार के कदम बता रहे हैं। वहीं सिंधिया कमलनाथ की डेढ़ साल की सरकार के कदमों की आलोचना कर रहे हैं। अपनी हर चुनावी सभा में कमलनाथ सिंधिया के साथ ही कांग्रेस छोड़कर भाजपा में आए 25 पूर्व विधायकों को गद्दार बता रहे हैं। वहीं भाजपा इन सभी को प्रदेश की जनता के लिए वफादार बता रही है। नेताओं की यह बयानबाजी जनता को पसंद नहीं आ रही है। सुरखी के प्रेमनाथ को कमलनाथ की डेढ़ साल की सरकार पर हमला जरा कम ठीक लग रहा है। प्रेमनाथ का कहना है कि अभी तो कमलनाथ सरकार का कामकाज देखा जाना था। वह कुछ कर पाते कि इससे पहले सरकार गिर गई। प्रेमनाथ कहते हैं कि सिंधिया ने पीठ में छुरा भोंका। क्योंकि वह मुख्यमंत्री बनना चाहते हैं। प्रेमनाथ कहते हैं कि हिंदुस्तान का इतिहास इस तरह के लोगों को जल्दी माफ नहीं कर पाता। वहीं ग्वालियर के रामानंद तिवारी का कहना है कि यह राजनीति है। ग्वालियर चंबल संभाग में स्व. माधवराव सिंधिया का कद था। ज्योतिरादित्य सिंधिया का एक कद है। इसका फायदा भाजपा को मिलेगा। कांग्रेस सिंधिया को गद्दार बता रही है, जबकि बरसों तक यही सिंधिया उनके लिए सब कुछ थे।

हैरानी की बात यह है कि इस उपचुनाव में कांग्रेस की तरफ से एकमात्र बड़े चेहरे के रूप में कमलनाथ सक्रिय हैं। पूरा उपचुनाव उनके इर्द-गिर्द घूम रहा है। वहीं कांग्रेस के कद्दावर नेता दिग्विजय सिंह चुनावी परिदृश्य से गायब हैं। इस संदर्भ में कांग्रेस के एक पदाधिकारी का कहना है कि ऐसा पार्टी की सोची-समझी रणनीति के तहत किया गया है। दरअसल, 15 महीने में अपने विधायकों की बगावत और धोखे के कारण सत्ता गंवाने वाले कमलनाथ के प्रति जनता की सहानुभूति है। कांग्रेस इस सहानुभूति को उपचुनाव में भुनाना चाहती है। इसलिए कमलनाथ मोर्चे पर सबसे आगे हैं। उधर, भाजपा की तरफ से शिवराज सिंह चौहान मोर्चे पर आगे हैं, जबकि ज्योतिरादित्य सिंधिया सहित अन्य नेता कम सक्रिय हैं। भाजपा ने अपने स्टार प्रचारकों की जो सूची जारी की है, उसमें भी सिंधिया 10वें नंबर पर हैं। यानी यह इस बात का संकेत है कि उपचुनाव में भाजपा आलाकमान को विश्वास है कि पार्टी शिवराज सिंह चौहान के **चेहरे पर ही अधिक से अधिक** सीटें जीत सकती है।

भाजपा के एक वरिष्ठ नेता कहते हैं कि शिवराज को चुनावी कमान इसलिए दी गई है कि ग्वालियर-चंबल में कांग्रेस ने सिंधिया को गद्दार के रूप में पेश किया है। संघ-भाजपा के पुराने नेता शिवराज के नेतृत्व पर सहमत हैं, लेकिन सिंधिया पर असहमत। भाजपा भी मान रही है कि जनता में शिवराज की स्वीकार्यता है। लिहाजा वह अब कोई रिस्क नहीं लेना चाहती। कांग्रेस एकमात्र चेहरे कमलनाथ के साथ और नेतृत्व में चुनाव में आगे बढ़ गई है। नाथ ने इस बार नए नेताओं को जिम्मेदारी सौंपी है। दिग्विजय को पर्दे के पीछे रखा गया है। पार्टी की अंदरूनी रणनीति है कि कमलनाथ चुनाव में शिवराज के साथ सिंधिया को निशाने पर लेंगे, लेकिन दिग्विजय का पूरा फोकस सिंधिया और उनकी टीम पर रहेगा। दिग्विजय ही पार्टी नेताओं और कार्यकर्ताओं के बीच समन्वय बनाएंगे। नाराज नेताओं से बात करेंगे। कमलनाथ प्रत्याशियों के समर्थन में जनसभाएं लेंगे। दिग्विजय समूह बैठक के साथ घर-घर जाएंगे। खास सीटों का प्रबंधन कमलनाथ के खास सिपहसालार ही देखेंगे। उन्होंने कोर टीम भी बनाई है, जो **प्रतिदिन के कैंपेन** और फीडबैक के साथ अन्य मुद्दों पर फोकस्ड काम कर रही है। यह इंदौर और ग्वालियर से काम कर रही है। चुनावी सभाओं में लोगों की संख्या को देखते हुए कांग्रेस में यह माना जा रहा है कि कार्यकर्ताओं ने बतौर नेता कमलनाथ को स्वीकार कर लिया है। कांग्रेस में नए नेता के तौर पर सज्जन सिंह वर्मा, एनपी प्रजापति, गोविंद सिंह और जीतू पटवारी को कमलनाथ ने अहम जिम्मेदारी दी है। इनसे दिग्विजय की कमी भरने की कोशिश है। कमलनाथ को भी लग रहा है कि यदि सही दिशा में थोड़ी मेहनत हो गई तो कांग्रेस आश्चर्यजनक परिणाम तक पहुंच जाएगी। इन नेताओं का फोकस प्रमुख सीटों पर है। बाकी पूर्व मंत्रियों की भी टीम बनाकर उन्हें सक्रिय किया गया है।

गौण हुए स्थानीय मुद्दे

जिन 28 विधानसभा क्षेत्रों में उपचुनाव हो रहा है, वहां स्थानीय समस्याओं की भरमार है। लेकिन हैरानी की बात यह है कि मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान सहित सभी नेता स्थानीय मुद्दों की जगह विपक्षी नेताओं पर आरोप लगाकर जनता को गुमराह कर रहे हैं। लगभग सभी चुनावी रैलियों में भी कांग्रेस और भाजपा के नेता अपने भाषणों में एक-दूसरे पर छीटाकशी करते नजर आ रहे हैं जबकि बात स्थानीय मुद्दों की होनी चाहिए। छोटे-मोटे नेता छोड़िए, मुख्यमंत्री शिवराज सिंह, केंद्रीय मंत्री नरेंद्र सिंह तोमर, मंत्री नरोत्तम मिश्रा, पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ और भाजपा सांसद ज्योतिरादित्य सिंधिया जैसे आला दर्जे के नेताओं का भाषण भी आरोप-प्रत्यारोप के इर्द-गिर्द ही घूम रहा है। भाजपा नेता जहां चुनावी सभाओं, कार्यकर्ता बैठकों में एक ही बात दोहरा रहे हैं कि ज्योतिरादित्य सिंधिया, उनके समर्थक मंत्रियों-विधायकों का कांग्रेस सरकार में अपमान हुआ इसलिए उन्होंने कांग्रेस छोड़ी। वहीं कांग्रेस भाजपा पर खरीद-फरोख्त का आरोप लगा रही है। कुल मिलाकर दोनों ही दल एक-दूसरे को गद्दार और खुद को वफादार कह रहे हैं। आरोप-प्रत्यारोप की राजनीति के बीच जनता के मूल मुद्दों को भुला दिया गया है। किसी भी दल के स्टार प्रचारक और प्रत्याशी मूल मुद्दों पर बात ही नहीं कर रहा है। ये बयानबाजी राजनीति से जुड़ी हो तो समझ भी आता है लेकिन ये बयानबाजी गद्दार वफादार से भी काफी ऊपर घटिया लेवल तक पहुंच गई है। अब तो चुनावी सभाओं में भी नेता अपनी हदें पार करते दिखाई देते हैं।

हालिया घटना का जिक्र करें तो मुरैना विधानसभा सीट से कांग्रेस नेता दिनेश गुर्जर ने मुख्यमंत्री शिवराज सिंह के खिलाफ विवादास्पद बयान दिया। मुरैना में एक सभा को संबोधित करते हुए कांग्रेस नेता दिनेश गुर्जर ने कहा, 'शिवराज तो भूखे-नंगे घर से पैदा हुए हैं। हमारे कमलनाथ देश के दूसरे सबसे अमीर उद्योगपति हैं।' अब कांग्रेस नेता के इस बयान पर भाजपा नेता चुप बैठ जाएं, ऐसा तो हो नहीं सकता। पलटवार करते हुए प्रदेश के गृहमंत्री नरोत्तम मिश्रा ने इस बयान को कांग्रेस की मानसिकता बताते हुए कहा, 'कमलनाथ तो चांदी की चम्मच लेकर पैदा हुए हैं। गरीब और गरीबी को वे क्या समझेंगे।' अपनी बयानबाजी को जारी रखते हुए मंत्री मिश्रा ने कहा, 'कांग्रेस जिंदगीभर गांधी परिवार के आगे घुटने टेकती आई है। उन्हें गरीबी या गरीबों से कोई लेना-देना नहीं है। जनता की पीड़ा वही समझ सकता है जो जनता के बीच से गया हो। चांदी की चम्मच लेकर पैदा होने वाले पीड़ा नहीं समझ सकता। कांग्रेस हमेशा विधायक, महिलाओं का अपमान करती आई है। कमलनाथ के बड़े उद्योगपति होने से कुछ लाभ नहीं हुआ। हमारे लिए तो जनता ही भगवान और जनार्दन हैं। अपने आराध्य के सामने घुटने टेकने में क्या गलत है।'

लोकतंत्र के दोराहे पर वोटर

महामारी के दौर में होने जा रहे उपचुनाव की ओर स्वाभाविक ही पूरे प्रदेश की निगाह लगी हुई है। इसकी वजह यह है कि इन चुनावों के नतीजों का प्रदेश की राजनीति पर असर पड़ना तय है। प्रदेश गहरे संकट से गुजर रहा है। कोरोना महामारी के इस दौर में मतदाता इन सब राजनीतिक तमाशों के प्रति उदासीन है और अपने चेहरे के साथ आंखों पर भी मास्क लगाए हुए है। उसे समझ नहीं आ रहा कि सत्ता बचाने के लिए सोशल डिस्टेंसिंग को तिलांजलि क्यों दी जा रही है? इसी माहौल में भाजपा के एक चुनाव प्रत्याशी सुरेश धाकड़ ने पोहरी में अपनी चुनावी सभा में कबूलनामा पेश किया कि 'हां, मैं बिका, लेकिन आपकी खातिर बिका।' इसका एक अर्थ यह है कि जनता खुद किसी बिकाऊ बंदे की तलाश में थी, जो उसे अब मिल गया है और पब्लिक चाहे भी तो इस सौदे को रद्द नहीं कर सकती। जाहिर है यह कोई आध्यात्मिक सौदा नहीं था, जो आत्मा से परमात्मा के बीच होता है। जिसका साध्य केवल ऐहिक बंधनों से मुक्ति होता है। यह तो सियासत के प्रांगण में सत्ता का सौदा था, एक सत्ता को ठुकराकर सत्ता के नए शीशमहल में निवास के लिए 'बिक' जाना था। क्योंकि सत्ता है तो रौब है, दाब है। धंधा है, दुकान है। जनता की सेवा है, मुकद्दर का मेवा है। मुख्य धारा में तैरते रहने का असीम सुख है। सत्ता की डुप्लीकेट चाबी से विचारधारा के उन गोदामों के ताले खोलने की कोशिश है, जिस तरफ फिरकना भी कभी गुनाह था। लेकिन वही अब पवित्र प्र (दक्षिणा) में तब्दील हो गया है। इसलिए भाइयों, हमें वोट जरूर देना। क्योंकि सौदे को स्वीकारने का नैतिक साहस हममे है। राजनीतिक अनैतिकता के स्मार्ट युग में इतनी स्वीकारोक्ति क्या कम नहीं है?

28 विधानसभा सीटों का उपचुनाव अब सीधे तौर पर मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान और पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ के बीच केंद्रित हो गया है। दोनों ने एक-दूसरे पर तीखे हमले तेज कर दिए हैं। हालांकि कांग्रेस ज्योतिरादित्य सिंधिया को भी आरोपों के घेरे में ले रही है, क्योंकि ग्वालियर-चंबल की 16 सीटों पर ज्योतिरादित्य का प्रभाव है। दूसरी ओर, वरिष्ठ कांग्रेसी दिग्विजय सिंह चुनावी सभाओं से दूर हैं और पर्दे के पीछे से संगठनात्मक रणनीति में लगे हैं, इसलिए भाजपा ने सामने मौजूद एकमात्र विपक्षी कमलनाथ को निशाने पर लिया है।

खर्च का जिम्मेदार कौन?

एक तरफ देश और प्रदेश कोरोना संक्रमण के इस दौर में आर्थिक मंदी से गुजर रहे हैं। ऐसे में मप्र में 2018 में हुए विधानसभा चुनाव के दो साल बाद ही 28 विधानसभा सीटों पर हो रहा उपचुनाव सबसे महंगा चुनाव साबित होने वाला है। उपचुनाव को लेकर तैयारियों पर करोड़ों रुपए खर्च होंगे। कोविड-19 संकटकाल के कारण हर एक विधानसभा सीट पर होने वाले उपचुनाव 2018 के उपचुनाव की तुलना में 5 गुना तक महंगा साबित होगा। 28 सीटों के उपचुनाव को लेकर मुख्य निर्वाचन पदाधिकारी ने राज्य सरकार से 40 करोड़ रुपए की मांग की है। यह राशि सरकार द्वारा चुनाव के लिए बजट में 40 करोड़ की राशि का प्रावधान करने के अतिरिक्त है। दरअसल, उपचुनाव कराने के लिए निर्वाचन आयोग ने सरकार से जो अतिरिक्त राशि की मांग

इनके बीच है मुकाबला

	विधानसभा क्षेत्र	कांग्रेस प्रत्याशी	भाजपा प्रत्याशी
■	जौरा	पंकज उपाध्याय	सूबेदार सिंह रजोधा
■	सुमावली	अजय सिंह कुशवाह	एदल सिंह कंषाना
■	मुरैना	राकेश मावई	रघुराज सिंह कंषाना
■	दिमनी	रविंद्र सिंह तोमर	गिर्राज डंडौतिया
■	अंबाह (अजा)	सत्यप्रकाश सखवार	कमलेश जाटव
■	मेहगांव	हेमंत कटारे	ओपीएस भदौरिया
■	गोहद (अजा)	मेवाराम जाटव	रणवीर सिंह जाटव
■	ग्वालियर	सुनील शर्मा	प्रद्युम्न सिंह तोमर
■	ग्वालियर पूर्व	सतीश सिकरवार	मुन्नालाल गोयल
■	डबरा (अजा)	सुरेश राजे	इमरती देवी
■	भांडेर (अजा)	फूलसिंह बरैया	रक्षा संतराम सरौनिया
■	करैरा (अजा)	प्रागीलाल जाटव	जसमंत जाटव
■	पोहरी	हरिवल्लभ शुक्ला	सुरेश धाकड़
■	बमोरी	कन्हैयालाल अग्रवाल	महेंद्र सिंह सिसोदिया
■	अशोकनगर (अजा)	आशा दोहरे	जजपाल सिंह जज्जी
■	मुंगावली	कन्हैयाराम लोधी	बृजेंद्र सिंह यादव
■	सुरखी	पारुल साहू	गोविंद सिंह राजपूत
■	मलहरा	रामसिया भारती	प्रद्युम्न सिंह लोधी
■	अनूपपुर (अजजा)	विश्वनाथ सिंह कुंजाम	बिसाहूलाल सिंह
■	सांची (अजा)	मदनलाल चौधरी	डॉ. प्रभुराम चौधरी
■	ब्यावरा	रामचंद्र दांगी	नारायण सिंह पवार
■	आगर (अजा)	विपिन वानखेड़े	मनोज ऊंटवाल
■	हाटपीपल्या	राजवीर सिंह बघेल	मनोज चौधरी
■	मांधाता	उत्तम राजनारायण सिंह	नारायण पटेल
■	नेपानगर (अजजा)	रामकिशन पटेल	सुमित्रा देवी
■	बदनावर	कमल पटेल	राजवर्धन सिंह दत्तीगांव
■	सांवेर (अजा)	प्रेमचंद गड्डू	तुलसीराम सिलावट
■	सुवासरा	राकेश पाटीदार	हरदीप सिंह डंग

की है, उससे कोरोना के बचाव और जरूरी मटेरियल की खरीदी की जानी है। जानकारी के मुताबिक इस बार के उपचुनाव पर हर एक विधानसभा सीट पर करीब पौने 3 करोड़ रुपए का खर्च आएगा। निर्वाचन आयोग ने उपचुनाव के लिए दिए गए बजट के अतिरिक्त राशि मांगने के पीछे कारण और काम भी गिनाए हैं। आयोग के मुताबिक मतदान केंद्रों तक कर्मचारियों को फिजिकल डिस्टेंस के साथ भेजने और इस पर परिवहन का खर्च, 1 दिन पहले पोलिंग स्टेशन को सैनेटाइज करने, हर बूथ के गेट पर थर्मल स्क्रीनिंग की व्यवस्था, महिला और पुरुष मतदाता के लिए अलग-अलग प्रतीक्षा रूम बनाने, पोलिंग स्टेशन पर मतदाताओं के लिए मास्क और दस्ताने की व्यवस्था करने जैसे काम पर बड़ी राशि खर्च होगी। वहीं, पोलिंग बूथों पर पैरामेडिकल स्टाफ की नियुक्ति और पीपीई किट खरीदने और जो कर्मचारी ड्यूटी पर होंगे उनकी कोरोना जांच के लिए धनराशि की जरूरत होगी। सवाल उठता है कि इस खर्च के लिए जिम्मेदार कौन है? चाल, चरित्र, चेहरा और नैतिकता की बात करने वाली पार्टियां और नेता जनता की गाढ़ी कमाई पर इस तरह का राजनीतिक खेल कब तक खेलते रहेंगे? अगर ऐसी परिस्थितियों में चुनावी खर्च राजनीतिक पार्टियों पर थोपा जाता तो निश्चित रूप से देश में दलबदल की नौबत शायद ही कभी आती।

गरीबी में आटा गीला

मप्र वर्तमान समय में 2 लाख करोड़ से अधिक के कर्ज में डूबा हुआ है। आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण सरकार हर माह औसतन 1200 करोड़ रुपए कर्ज ले रही है। ऐसे में 28 सीटों पर हो रहे उपचुनाव में बड़ी राशि खर्च होनी है। अगर राजनीतिक पार्टियों को सत्ता की लालसा नहीं रहती तो गरीबी में आटा गीला नहीं होता। बड़े बुजुर्ग हमेशा से कहते आए हैं कि कर्ज लेकर घी पीने की आदत ठीक नहीं। जितनी चादर हो उतने पैर पसारने चाहिए, वक्त-बेवक्त के लिए हमेशा थोड़ी पूंजी बचाकर रखो। अनुभवों के आधार पर बड़ों की इन नसीहतों से जो भी सबक नहीं लेता, उसे नुकसान निश्चित है। चाहे वो घर का मुखिया हो या देश, राज्यों में सत्ता संचालित करने वाले प्रधानमंत्री, मुख्यमत्री। उनके किए का खामियाजा उनसे जुड़े हर शख्स, हर सूबे और तमाम पीढ़ियों को भुगतना पड़ता है। कर्ज लेकर तरक्की और भविष्य की बुनियाद मजबूत करना का कदम बुरा नहीं है, लेकिन जब उसका इस्तेमाल सार्थक, सुनियोजित न होकर व्यक्तिगत या जन, समाज, राष्ट्रहित के नाम पर सियासी हित साधने के लिए होने लगे, तो बदहाली के चक्रव्यूह में घिरना हमारी नियति बन जाएगी। इन सारी नसीहतों और नतीजों का जिक्र इसलिए किया जा रहा है, क्योंकि हम मप्र के कदम आत्मनिर्भरता की बजाय कर्ज पर निर्भरता की ओर लगातार बढ़ते देख रहे हैं।

दो साल पहले तक जिस राज्य सरकार के खजाने में 7-8 हजार करोड़ रुपए हमेशा पड़े रहते थे, वह इस समय पैसे-पैसे को मोहताज है। मार्च 2020 में तत्कालीन कमलनाथ सरकार के अपदस्थ होने के बाद राज्य में बनी शिवराज सरकार अपने कार्यकाल के 7 महीनों में राज्य को चलाने के लिए 12 हजार करोड़ का कर्ज ले चुकी है। सरकार नवंबर-दिसंबर में 6 हजार करोड़ का और कर्ज लेने के लिए तैयार है। इस वित्तीय वर्ष की समाप्ति तक राज्य पर कुल कर्ज 2 लाख 10 हजार 538 करोड़ रुपए हो चुका था, जो नए साल में वित्तीय वर्ष की समाप्ति तक 2 लाख 40 हजार करोड़ तक पहुंच सकता है। हर साल 30 से 40 हजार करोड़ का कर्ज सरकार पर बढ़ता जा रहा है। इसी अनुपात में ब्याज की रकम भी सालाना करीब 3 से 4 हजार करोड़ रुपए बढ़ रही है। इसकी भरपाई जनता से लिए जा रहे टैक्स से हो रही है। जनता पर नए-नए टैक्स थोपे जा रहे हैं और उससे होने वाली आय माननीयों पर खर्च हो रही है। ऐसे में प्रदेश की साढ़े सात करोड़ आबादी का भला कैसे होगा? प्रदेश की जनता तो भगवान भरोसे ही है।

यादें छोड़ गए पासवान

देश के सर्वाधिक चर्चित दलित नेता रामविलास पासवान अब नहीं रहे और देश-विदेश से सामाजिक न्याय के पक्षधर तमाम नेताओं और लोगों के शोक संदेश आ रहे हैं। जीवन में बाद के वर्षों में पासवान भले ही आरएसएस-भाजपा के साथ मिलकर सामाजिक न्याय विरोधी तमाम बड़े-बड़े कार्यों में सहभागी रहे हों लेकिन उनकी मूल रूप से छवि सामाजिक न्याय के योद्धा की ही रही। यही कारण है कि उनके तमाम विरोधी भी उन्हें सम्मान देते थे।

देश के प्रमुख दलित नेताओं में से एक केंद्रीय मंत्री रामविलास पासवान का 8 अक्टूबर को निधन हो गया। वह 74 वर्ष के थे। पासवान कुल 8 बार लोकसभा का चुनाव जीते (7 बार हाजीपुर से, 1 बार रोसड़ा से)। लोकसभा का कुल 12 बार चुनाव लड़ा। हाजीपुर से पासवान कुल 9 बार लड़े जिसमें 7 बार जीते। पासवान 1969 में विधानसभा क्षेत्र अलौली से कांग्रेसी विधायक मिश्री सदा को हराकर पहली बार संसोपा (संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी) के टिकट पर चुनाव जीतकर बिहार विधानसभा पहुंचे थे। उसी दरम्यान उनका चयन डीएसपी पद के लिए भी हो गया था। उनके पिताजी जामुनदास चाहते थे कि बेटा जेलभेजवा पार्टी से जुड़े रहने की बजाय रसूखदार और रोबदार पुलिस पदाधिकारी के रूप में समाज का नाम रोशन करे। उनके पिताजी और माताजी कबीरपंथी थे, और सात्विक विचार रखते थे।

बहरहाल, 1972 में पासवान विधायक का चुनाव हार गए। कोढा (कटिहार) से उपचुनाव लड़े, वहां भी हार गए। उसके बाद 77 में हाजीपुर से लोकसभा का चुनाव लड़े जिसमें जनता पार्टी की ओर से किसी और को उम्मीदवार (शायद रामसुंदर दास) बनाकर भेज दिया गया। तब जेपी ने एक बयान जारी किया, 'मुझे नहीं मालूम कि जनता पार्टी का उम्मीदवार कौन है, मगर हाजीपुर में जेपी का उम्मीदवार रामविलास पासवान है।' और वह चुनाव साढे चार लाख वोट से जीतकर उन्होंने वर्ल्ड रिकॉर्ड बनाया, जिसे खुद ही 1989 में तोड़ा। भागलपुर में लोकदल के एक सम्मेलन में देशभर से आए नेताओं के बीच अपने संबोधन में कर्पूरी ठाकुर ने उनसे 'भारतीय राजनीति का उदीयमान नक्षत्र' कहा था। दोनों आपातकाल के दौरान नेपाल में भूमिगत थे। ये और बात है कि बाद के वर्षों में कर्पूरी ठाकुर के चित्त से पासवान और रामजीवन सिंह बुरी तरह उतर गए, और कर्पूरी ठाकुर ने दोनों को अपनी किताब 'कितना सच, कितना झूठ' में जमकर कोसा।

अगस्त 1982 की लोकसभा में मंडल कमीशन पर हुई बहस में उनके शानदार हस्तक्षेप ने इंदिरा गांधी की सरकार को पानी-पानी कर दिया था। बहस पर टाल-मटोल हो रहा था। वे सोमनाथ चटर्जी के घर गए थे, और उनसे कहा था, 'कल अगर मंडल कमीशन की रपट पर बहस नहीं होगी, तो सदन में वो सीन क्रिएट होगा जो आज तक नहीं हुआ।'

1984 में इंदिरा गांधी के निधन के बाद उनके घर पर पथराव हुआ, कर्पूरी ठाकुर भी उनके ही घर पर ठहरे थे। दोनों ने किसी तरह जान बचाई शायद चौधरी साहब के घर जाकर। बहरहाल, चौधरी चरण सिंह ने बिजनौर के उपचुनाव में उन्हें बिहार से उप्र बुला लिया। मीरा कुमार और मायावती भी उम्मीदवार थीं। वे मीरा कुमार से तकरीबन 5 हजार मतों से कड़े मुकाबले में हार गए।

1989 में बनी नेशनल फ्रंट सरकार में मंडल कमीशन की रिपोर्ट जिस मंत्रालय के पास थी, उसकी लेटलतीफी देखते हुए सरकार के मुखिया वीपी सिंह ने रपट को देख-परख कर उस पर त्वरित निर्णय का जिम्मा उनके मंत्रालय पर डाल दिया, और बड़े मनोयोगपूर्वक उस काम को उन्होंने सेक्रेटरी पीएस कृष्णन की मदद से समय से पहले पूरा करके प्रधानमंत्री को दे दिया। उस वक्त उनका श्रम, रोजगार व कल्याण मंत्रालय आज के 6 छोटे-छोटे मंत्रालयों को मिलाकर एक बड़े मंत्रालय की शक्ल में था। पासवान जिस भी मंत्रालय में रहे, शानदार काम किया।

जनता दल में 1997 में हुए विभाजन के बाद 1998 के लोकसभा चुनाव में पूरे बिहार में लालू यादव के राष्ट्रीय जनता दल की लालटेन के आगे जनता दल का चक्र छाप बुरी तरह प्रभावहीन हुआ। उस आम चुनाव में जनता दल के टिकट पर पूरे बिहार की 54 सीटों में से जीतने वाले इकलौते उम्मीदवार पासवान थे, वो भी इसलिए कि समता पार्टी ने उनके खिलाफ उम्मीदवार नहीं दिया था। 1998 की 13 महीने की वाजपेयी के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार चली नहीं। खुद लालकृष्ण आडवाणी उनके घर पर आए, और सरकार को बचा लेने के लिए आग्रह किया, मनचाहा मंत्रालय ऑफर किया, मगर वे टस से मस नहीं हुए, 1 वोट से सरकार गिरा दी। लेकिन 1999 के चुनाव में शरद की अगुवाई वाले उनके जनता दल ने एनडीए में जाना स्वीकार किया, जिससे रुष्ट होकर एचडी देवगौड़ा ने अपना अलग दल जनता दल (सेक्युलर) बना लिया।

● राजेश बोरकर

6 प्रधानमंत्रियों के साथ काम किया

रामविलास पासवान देश की समकालीन राजनीति के वे सबसे बड़े और चर्चित नेताओं में शुमार रहे। उन्होंने राजनीति में कई मुकाम हासिल किया है। पासवान ने 6 प्रधानमंत्रियों के साथ काम किया। वीपी सिंह, एचडी देवगौड़ा, आइके गुजराल, अटल बिहारी वाजपेयी, डॉ. मनमोहन सिंह और नरेंद्र मोदी की 7 सरकारों में पासवान ने क्रमशः श्रम, कल्याण व रोजगार, रेल व संसदीय कार्य, दूर संचार, रसायन, उर्वरक व इस्पात, और खाद्य व उपभोक्ता मामले का मंत्रालय संभाला।

विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत में यह विसंगति दिन पर दिन बढ़ती जा रही है कि केंद्र सरकार के इशारे पर राज्यपाल राज्य सरकारों पर अंकुश लगाने का प्रयास करते रहते हैं। केंद्र में जिस पार्टी की सरकार रहती है, वह विपक्षी पार्टी वाली राज्य सरकारों पर राज्यपाल के माध्यम से दबाव बनाते रहती है। इस कारण देश में राजनीतिक द्वेष बढ़ रहा है। खासकर केंद्र में भाजपा के शासनकाल में यह परंपरा तेजी से बढ़ी है। इससे कई राज्यों से टकराव की स्थिति निर्मित हो चुकी है।

डराते राज्यपाल

राज्यपाल को राज्य का संरक्षक माना जाता है। लेकिन पिछले एक दशक में यह देखने को मिल रहा है कि राज्यपाल केंद्र सरकार की कठपुतली बनकर काम कर रहे हैं। इस साल महाराष्ट्र और पश्चिम बंगाल के राज्यपाल अपनी कार्यप्रणाली के कारण विवादों में रहे हैं। पश्चिम बंगाल के राज्यपाल जगदीप धनखड़ एक बार फिर सुर्खियों में हैं। वजह वही पुरानी है। यानी ममता बनर्जी सरकार से उनकी नाराजगी। जगदीप धनखड़ का कहना है, 'अगर संविधान की रक्षा नहीं हुई तो मुझे कार्रवाई करनी पड़ेगी। राज्यपाल के पद की लंबे समय से अनदेखी की जा रही है। मुझे संविधान के अनुच्छेद-154 पर विचार करने को बाध्य होना पड़ेगा।' यह अनुच्छेद कहता है कि राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित होगी और वह इसका प्रयोग इस संविधान के अनुसार स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करेगा।

उधर, तृणमूल कांग्रेस ने राज्यपाल पर अपने पद की छवि बिगाड़ने का आरोप लगाया है। पार्टी का कहना है कि जगदीप धनखड़ को इस पद के बजाय प्रदेश भाजपा का अध्यक्ष पद संभालना चाहिए। इससे पहले मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने 26 सितंबर को राज्यपाल को पत्र लिखकर उनसे आग्रह किया था कि वे उसी दायरे में रहते हुए काम करें जो संविधान ने उनके लिए तय किया है।

राज्यपाल और राज्य सरकार के बीच इस तरह के आरोप-प्रत्यारोपों की यह पहली घटना नहीं है। इससे पहले राजस्थान में चली सियासी उथल-पुथल के दौरान वहां सत्ताधारी कांग्रेस ने राज्यपाल कलराज मिश्र पर कई बार पक्षपात के आरोप लगाए थे। उस समय पार्टी का कहना था कि राज्यपाल का आचरण देखकर लगता है कि जैसे वे एक पार्टी विशेष के हितों की पूर्ति कर रहे हैं। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता और वरिष्ठ अधिवक्ता अभिषेक मनु सिंघवी ने उस समय सीधे-सीधे यह आरोप लगाया था कि कलराज मिश्र केंद्र के इशारे पर काम कर रहे हैं।

राज्यपालों पर इस तरह के आरोप अब इतने आम हो चुके हैं कि इनसे कोई चौंकता नहीं है। कभी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इस पद की एक ऐसी संस्था के रूप में कल्पना की थी जो निष्पक्ष होगी और संवैधानिक संरक्षक की अपनी भूमिका का निर्वाह करते हुए देश के संघीय ढांचे को मजबूत करेगी। लेकिन आज स्थिति इससे मीलों दूर दिखती है। आज राज्यपाल अपने आचरण में केंद्रीय सत्ता के ऐसे एजेंट के तौर पर दिखते हैं जिनके लिए इस सत्ता को थामे पार्टी के हित ही सबसे ऊपर होते हैं।

राज्यपाल जैसे पद की अवधारणा सदियों से

राज्यपालों के मामले में वही परंपरा चल रही है जो सदियों पहले शुरू हुई थी। असल में जब राज्यपाल जैसे पद की अवधारणा अस्तित्व में आई थी तो इसका मूल उद्देश्य यही था कि राज्यों पर केंद्रीय सत्ता की पकड़ मजबूत रहे। इतिहास पर नजर डालें तो जब भी कोई राजा किसी नए राज्य को जीतकर अपने राज्य में मिलाता था तो प्रशासन के सुभीते के लिए उसकी कमान अपने विश्वासपात्र किसी सगे-संबंधी या अन्य शख्स को थमा देता था। भारत में पहली बार राजनीतिक एकता स्थापित करने वाले मौर्य वंश के राजा बिंदुसार ने उज्जयिनी का राज्यपाल अपने पुत्र अशोक को बनाया था जो बाद में सम्राट बना। इस तरह की व्यवस्था मौर्य वंश के बाद आए शुंग वंश से लेकर गुप्त, चालुक्य, राष्ट्रकूट और मुगल वंश तक रही। अकबर के समय कुल प्रांतों की संख्या 15 थी जिनमें से एक गुजरात भी था और एक समय वहां के सूबेदार यानी राज्यपाल टोडरमल भी थे। मुगलिया सल्तनत गई और ब्रिटिश राज आया, लेकिन राज्यपालों की भूमिका वही रही।

शुरू से राज्यपाल का उपयोग सत्ता के लिए होता रहा

गौरतलब है कि भारतीय संविधान में अनुच्छेद-155 में कहा गया कि राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा। राष्ट्रपति केंद्र में संवैधानिक प्रमुख था तो राज्य में राज्यपाल को यह जिम्मेदारी दी गई। वह राज्य में केंद्र का प्रतिनिधि हो गया। लेकिन 1952 में पहले आम चुनाव के बाद से ही इस संस्था के भविष्य के संकेत दिखने लगे। मद्रास में आम चुनाव के साथ हुए विधानसभा चुनावों में कांग्रेस को झटका लगा था। वह 375 में से 152 सीटें ही जीत सकी। यानी सबसे बड़ी पार्टी होने के बाद भी वह बहुमत से दूर थी। उधर, कम्युनिस्टों सहित सभी विपक्षी पार्टियों ने गठबंधन कर संयुक्त मोर्चा बना लिया और बहुमत का दावा किया। कांग्रेस में खलबली मच गई। राज्य के धाकड़ नेता चक्रवर्ती राजगोपालाचारी तब तक सक्रिय राजनीति से संन्यास ले चुके थे। आनन-फानन में उन्हें खूब मनाकर वापस लाया गया। कांग्रेस को उम्मीद थी कि अब राजगोपालाचारी का कद और कौशल ही कम्युनिस्टों को सत्ता में आने से रोक सकता है। इसके बाद राज्यपाल ने कांग्रेस को सरकार बनाने का न्यौता दिया। शपथ ग्रहण के बाद विपक्षी खेमे में सेंध लगाने के प्रयास शुरू हुए। आखिरकार सरकार बनाने का न्यौता मिलने के तीन महीने बाद तीन जुलाई 1952 को राजगोपालाचारी ने 200 विधायकों के समर्थन के साथ विधानसभा में बहुमत साबित कर दिया।

इस वक्त जो एक चलन बेहद मजबूत होता जा रहा है वह यह कि केंद्र में दूसरी पार्टी की सरकार आते ही राज्यपालों के भी बदले जाने का सिलसिला शुरू हो जाता है। यह चलन कितना व्यापक है यह इस बात से ही समझा जा सकता है कि वीपी सिंह की राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने आते ही सभी राज्यपालों को इस्तीफा देने के लिए कह दिया था। इससे पहले आपातकाल के बाद मोरारजी देसाई की सरकार ने भी कई राज्यपालों को उनके पद से हटा दिया था। पिछली यूपीए सरकार ने भी 2004 में सत्ता में आते ही चार राज्यपालों को हटा दिया था। वर्तमान मोदी सरकार ने भी इससे कुछ अलग नहीं किया। दरअसल राज्यपालों की नियुक्ति भले राष्ट्रपति करते हैं लेकिन, उनका कार्यकाल प्रधानमंत्री कार्यालय की दया का मोहताज दिखता है।

ऐसा नहीं है कि इस संस्था का स्वरूप बेहतर करने की कोशिशें नहीं की गईं। सरकारिया आयोग से लेकर प्रशानिक सुधार आयोग और यहां तक कि सुप्रीम कोर्ट ने भी कहा कि राज्यपाल का कार्यकाल सुनिश्चित होना चाहिए। इन्हें हटाने के लिए एक अलग प्रक्रिया (अभी केंद्र सरकार की सलाह पर राष्ट्रपति कभी भी राज्यपाल को हटा सकता है) की भी बात हुई। सुप्रीम कोर्ट ने तो यह तक कहा कि केंद्र में सरकार बदलते ही राज्यपालों को नहीं हटाया जा सकता। लेकिन इसके बाद भी मामला वहीं का वहीं है। और जब भी राज्यपालों में से कोई खबर में आता है तो सबसे पहले यही बात सामने आती है कि संबंधित राज्य में केंद्र में सत्ताधारी दल से अलग पार्टी की सरकार है। महाराष्ट्र से लेकर राजस्थान और पश्चिम बंगाल तक तमाम राज्यों में यह देखा जा सकता है।

राज्यपालों के बयान भी जब खबर बनते हैं तो कई बार इसकी वजह यही होती है कि वे विवादित और अपने पद की गरिमा गिराने वाले होते हैं। मसलन भाजपा के नेता रहे और अब मेघालय के राज्यपाल तथागत रॉय ने पिछले साल कहा कि देश के लोगों को कश्मीरियों और उनके द्वारा बेचे जाने वाले सामान का बहिष्कार करना चाहिए। दिलचस्प बात है कि बीते दिनों अपने पद पर रहते हुए ही उन्होंने वापस सक्रिय राजनीति में लौटने की इच्छा जताई है। उनका कहना है, 'राज्यपाल के तौर पर मेरा कार्यकाल खत्म होने के बाद, मैं सक्रिय राजनीति में लौटना और पश्चिम बंगाल की सेवा करना चाहूंगा। मैं अपने राज्य लौटने के बाद पार्टी से इस बारे में बात करूंगा। इसे स्वीकारना या खारिज करना उस पर है।'

वैसे राज्यपालों का फिर से सक्रिय राजनीति में आना कोई नई बात नहीं है। इससे पहले कांग्रेस के नेता सुशील कुमार शिंदे और शीला दीक्षित ऐसा कर चुके हैं। शिंदे आंध्र प्रदेश का राज्यपाल बनने के बाद केंद्र में ऊर्जा मंत्री बन गए और दीक्षित केरल की राज्यपाल रहने के बाद उत्तर प्रदेश के पिछले विधानसभा चुनाव में कांग्रेस की मुख्यमंत्री पद की उम्मीदवार थीं। भाजपा के मदनलाल खुराना भी ऐसा ही एक उदाहरण हैं जो राजस्थान का राज्यपाल बनने के बाद फिर से सक्रिय राजनीति में आ गए थे। इससे साफ होता है कि राज्यपाल बनने वाले ऐसे ज्यादातर लोगों की राजनीतिक लालसाएं और पार्टीगत निष्ठाएं जिंदा रहती हैं। सवाल है कि क्या इससे अराजनीतिक और निष्पक्ष होने की वह अवधारणा ही ध्वस्त होती नहीं दिखती जिसके आधार पर संविधान निर्माताओं ने इस संस्था को जारी रखा था। ऐसे भी उदाहरण हैं जब राज्यपालों की सिफारिश पर प्रदेश में राष्ट्रपति शासन के फैसले को अदालतों ने पलट दिया। और आगे जाएं तो एनडी तिवारी और वी षण्मुगनाथन जैसे भी मामले हैं जिन्होंने इस पद की गरिमा को और भी पाताल में पहुंचाने का काम किया।

केंद्र से अलग पार्टी की सत्ता वाले राज्यों के मुखिया राज्यपाल पर भरोसा करते नहीं दिखते और ऐसा भी नहीं लगता कि केंद्र भी राज्यपाल पर पूरी तरह से भरोसा करता है। संविधान के अनुच्छेद-356 में राष्ट्रपति शासन लगाने की शक्ति केंद्र ने अपने पास रखी है तो इसमें यह भी व्यवस्था है कि ऐसा करने के लिए वह सिर्फ राज्यपाल की रिपोर्ट पर निर्भर नहीं है। केंद्र-राज्य संबंधों के इतर देखें तो राज्यपालों की **गतिविधियां सार्वजनिक आयोजनों में भाग** लेने और नियमित दिल्ली दौरों तक सिमटी दिखती हैं। या फिर वे जनप्रतिनिधियों को पद और गोपनीयता की शपथ दिलाने जैसे चुनिंदा मौकों पर ही याद किए जाते हैं। कई लोग मानते हैं कि ऐसे कुछ मौकों के लिए **बिना झंझट** के एक वैकल्पिक व्यवस्था हो सकती है और इसलिए राज्यपाल जैसे अनावश्यक और खर्चीले पद को ढोने का कोई तुक नहीं है। लेकिन बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधेगा? कोई भी पार्टी या सरकार राज्यपाल व्यवस्था को खत्म करने की गलती नहीं करेगी।

● **इन्द्र कुमार**

भारतीय लोकतंत्र के भीड़ भरे बाज़ार में बेशुमार पार्टियां हैं। लेकिन भाजपा अकेली राष्ट्रीय पार्टी है जिसे विचारधारा और पॉलिटिक्स के आधार पर अलग से पहचाना जा सकता है। उसके पास कुछ ऐसा है जो बाकी पार्टियों के पास नहीं है। मार्केटिंग की भाषा में भाजपा के पास यूएसपी यानी यूनिक सेलिंग प्वायंट या प्वायंट्स हैं। इस यूएसपी के सहारे भाजपा ने भारतीय राजनीति में वो जगह बना ली है जिसकी वजह से ये कहा जा सकता है कि हम भाजपा सिस्टम यानी भाजपा के वर्चस्व वाली राजनीति के दौर में प्रवेश कर चुके हैं या करने वाले हैं। ये दौर लंबा चल सकता है।

गठबंधन ऐसे ही चलता है!

अकाली दल को शिकायत है कि भाजपा अब पहले वाली भाजपा नहीं रह गई है। अटल बिहारी वाजपेयी और लालकृष्ण आडवाणी के समय सहयोगी पार्टियों को जैसा सम्मान मिलता था, वैसा सम्मान अब नहीं मिलता है। अकाली दल ने जैसे ही यह शिकायत की, शिवसेना ने आगे बढ़कर उसका समर्थन किया। पर क्या सचमुच भाजपा का मौजूदा नेतृत्व यानी नरेंद्र मोदी और अमित शाह सहयोगी पार्टियों के साथ अच्छा बर्ताव नहीं करते हैं और उनके बर्ताव की वजह से शिवसेना और अकाली दल एनडीए से बाहर हुए हैं? यह पूरी तरह से सच नहीं है। असल में गठबंधन की राजनीति पार्टियों की हैसियत और उनकी जरूरत से चलती है, जिस पर विचारधारा का झीना सा परदा डाला जाता है। गठबंधन में जब नेतृत्व करने वाली पार्टी बहुत मजबूत हो जाती है तो वह सहयोगियों को महत्व देना कम कर देती है। सहयोगियों की पूछ घटने की दूसरी स्थिति यह होती है कि सहयोगी पार्टी कमजोर हो जाए या उसकी जरूरत समाप्त हो जाए। एक तीसरी स्थिति होती है, जब सहयोगी पार्टियों की महत्वाकांक्षा बहुत बढ़ जाए या उसके सामने मजबूरी आ जाए तब गठबंधन टूटता है।

असल में गठबंधन की राजनीति पार्टियों की आपसी जरूरत और उनकी राजनीतिक ताकत पर टिकी होती है। सभी पार्टियों को इस हकीकत को जानना और समझना चाहिए। उन्हें किसी भ्रम में नहीं रहना चाहिए कि अमुक नेता बहुत भले थे तो उन्होंने बड़ा सम्मान दिया या अमुक नेता निजी तौर पर बहुत अहंकारी हैं इसलिए उन्होंने सहयोगियों का सम्मान नहीं किया। राजनीति में नेता के निज व्यवहार का कोई खास मतलब नहीं होता है। इसे सिर्फ एक मिसाल से समझा जा सकता है। कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी के लिए अगर निज व्यवहार में कोई नेता सबसे करीबी हो सकता है तो वे लालू प्रसाद हैं, जिन्होंने सोनिया को देश की बहू बताकर विदेशी मूल के मुद्दे पर हमेशा उनका बचाव किया। पर 2009 के लोकसभा चुनाव में जब कांग्रेस 206 सीट जीत गई और लालू प्रसाद की पार्टी को सिर्फ पांच सीटें मिलीं तो कांग्रेस और सोनिया गांधी ने लालू प्रसाद को घास तक नहीं डाली।

यह सही है कि चुनाव से पहले लालू प्रसाद ने अपनी महत्वाकांक्षा में एकतरफा तरीके से कांग्रेस से तालमेल खत्म कर लिया था। पर उसके बाद तो लालू दिल्ली में सोनिया से लेकर हर कांग्रेसी के दरबार में भटकते रहे थे और निराश होकर कहा था कि 'अब समझ में आया कि दिल्ली में सिर्फ ताकत की पूजा होती है।' जब उनके पास 25 सांसद थे तब उनके हिसाब से यूपीए सरकार चलती थी, जब उनके पांच रह गए तो किसी ने नहीं पूछा। तब लालू प्रसाद खुद चुनाव जीतकर आए थे और जिन रघुवंश प्रसाद को मनरेगा मैन कहा जा रहा है और जिनके निधन पर कांग्रेस के **नेता आठ-आठ आंसू रोए** वे भी जीतकर आए थे पर कांग्रेस ने राजद को यूपीए में लेकर लालू या रघुवंश प्रसाद को मंत्री बनाने

22 साल पहले बना था राजग

केंद्र में सत्तारूढ़ राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) 1998 में अस्तित्व में आया था। अटल बिहारी वाजपेयी के दौर में बने इस गठबंधन में भाजपा के साथ समता पार्टी, शिरोमणि अकाली दल और शिवसेना मुख्य तौर पर शामिल थे। हालांकि, तब अन्य दलों को जोड़कर इसमें 13 सदस्य थे। समता पार्टी के संस्थापक जॉर्ज फर्नांडिस से लेकर अब कांग्रेस के पाले में जा चुके शरद यादव और तेलुगू देशम पार्टी प्रमुख चंद्र बाबू नायडू भी इसके संयोजक रह चुके हैं। देश में गैर कांग्रेसी सरकार के खिलाफ एक प्रयास था। इस गठबंधन ने 1998 से लेकर 2004 तक केंद्र में सरकार चलाई। दूसरी पाली में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में 2014 से राजग की सरकार चल रही है। खास बात यह है कि एक समय ऐसा भी आया, जब राजग में 35 दल शामिल रहे। आज भी पूर्वोत्तर के छोटे-छोटे दलों को मिलाकर डेढ़ दर्जन दल राजग में शामिल हैं। वाजपेयी के समय ममता बनर्जी की तृणमूल कांग्रेस, द्रमुक व बीजू जनता दल भी राजग का हिस्सा रह चुके हैं। तेलुगू देशम पार्टी मोदी और शाह के समय भी राजग में रही है।

की जरूरत नहीं समझी। लालू प्रसाद की पार्टी राजद अब भी यूपीए का हिस्सा है पर 2009 से 2014 तक जब कांग्रेस मजबूत रही और सत्ता में रही तब उसने लालू की पार्टी को यूपीए में नहीं रखा। सो, गठबंधन की राजनीति नेताओं के निज व्यवहार से नहीं, बल्कि पार्टियों की ताकत और जरूरत के हिसाब से चलती है।

ऐसा नहीं है कि नरेंद्र मोदी और अमित शाह सहयोगी पार्टियों और उनके नेताओं के साथ अच्छा बर्ताव नहीं करते हैं। उनका अच्छा बर्ताव इस बात से तय होता है कि सहयोगी पार्टी की उनको कितनी जरूरत है और सहयोगी पार्टी कितनी मजबूत हैं। याद करें कैसे पिछले लोकसभा चुनाव में दो सांसदों वाली पार्टी जनता दल यू को भाजपा ने अपने बराबर सीटें दी थीं। नीतीश कुमार 2014 में अकेले चुनाव लड़कर दो सीट की हैसियत में आए थे। पर 2019 के चुनाव में बिहार की 40 सीटों के बंटवारे में भाजपा और जदयू 17-17 सीटों पर लड़े। तब से लेकर अभी तक नरेंद्र मोदी और अमित शाह दोहराते रहते हैं कि नीतीश ही बिहार में एनडीए के नेता हैं और इस बार भी विधानसभा का चुनाव भाजपा उनके चेहरे पर ही लड़ रही है। सोचें, नीतीश कुमार का निज व्यवहार नरेंद्र मोदी के प्रति कैसा रहा था। नीतीश ने उनके नाम पर एनडीए छोड़ा था और मोदी ने उनके डीएनए में खोट बताया था पर आज दोनों एक-दूसरे का 'सम्मान' कर रहे हैं। असल में यह कोई सम्मान नहीं होता है, एक-दूसरे की जरूरत होती है, जो कभी भी खत्म हो सकती है।

शिवसेना और अकाली दल दोनों इस बात की दुहाई दे रहे हैं कि अटल-आडवाणी की भाजपा अलग थी। वह अलग इसलिए थी क्योंकि भाजपा उस समय 183 सीटों की पार्टी थी और वाजपेयी की सरकार दो दर्जन सहयोगी पार्टियों पर निर्भर थी। आज वह 303 सीट की पार्टी है और किसी पर निर्भर नहीं है। सो, अगर उसके नेताओं की सोच और सहयोगियों के प्रति उनका बर्ताव बदला है तो वह नेता के निजी चारित्रिक गुणों के कारण नहीं हुआ है, बल्कि इस आंकड़े के कारण हुआ है कि भाजपा आज किसी पर निर्भर नहीं है। इसके बावजूद आज भी जहां जरूरत पड़ती है वहां पार्टी के 56 इंची छाती वाले नेता भी समझौता करते हैं, सहयोगियों की शर्तें मानते हैं और उन्हें सत्ता में हिस्सेदारी भी देते हैं। और जो लोग अटल-आडवाणी की भाजपा को बेहतर बता रहे हैं क्या उनको याद नहीं है कि उस समय भी सहयोगी पार्टियां भाजपा को छोड़कर गई थीं!

आज शिवसेना और अकाली दल को शिकायत है पर असलियत यह है कि शिवसेना ने अपना मुख्यमंत्री बनाने की जिद में गठबंधन तोड़ा और अकाली दल ने किसान वोट की मजबूरी में एनडीए छोड़ा है। परंतु एक फैशन बन गया है कि सबका ठीकरा मोदी-शाह के निज व्यवहार पर फोड़ना है। जैसे मोदी-शाह के कारण ही एनडीए बिखर रहा है! अगर ऐसा है तो अटल-आडवाणी के समय क्यों एनडीए बिखरा था? डीएमके से लेकर तृणमूल कांग्रेस और टीडीपी से लेकर नेशनल कॉन्फ्रेंस तक अनगिनत पार्टियां क्यों भाजपा से अलग हो गई थीं? ऐसे ही 145 सीट वाली कांग्रेस ने 2004 में यूपीए बनाया तो डेढ़ दर्जन सहयोगी पार्टियां साथ थीं पर 2009 में जब उसे 206 सीटें आईं तो उसने सहयोगियों के साथ क्या किया? उसने तो अपने सहयोगियों को ही पकड़कर जेल में डाल दिया और 2014 आते आते दो-चार को छोड़कर बाकी सारे सहयोगी यूपीए छोड़ गए।

असल में राजनीति में सबकी अपनी जरूरतें होती हैं, अपनी उपयोगिता होती है और अपनी प्राथमिकताएं होती हैं। राष्ट्रीय पार्टियों की अपनी जरूरतें होती हैं और क्षेत्रीय पार्टियों के अपने हित होते हैं। सबकी राजनीति अपनी जरूरतों और अपने हितों से परिभाषित होती हैं और उसी से गठबंधन तय होते हैं। उसके लिए किसी एक नेता को या किसी एक पार्टी को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। दूसरे, गठबंधन की राजनीति कभी भी एकतरफा नहीं होती है। यह हमेशा दोतरफा प्रक्रिया है और जब तक दोनों के हित पूरे होते रहेंगे, तभी तक गठबंधन बना रह सकता है। अगर पार्टियां इस राजनीतिक वास्तविकता को समझने लगेंगी तो नेताओं को दोष देना बंद कर देंगी।

संभवत: इस गठबंधन के स्थायित्व में उनका जोखिम ज्यादा था। उनकी चिंता यह भी थी कि उनके अपने प्रभाव क्षेत्र को भाजपा की सेंध से कैसे बचाया जाए? 22 वर्षों के इस सफर में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन ने अनेक उतार-चढ़ाव तय किए हैं, लेकिन भाजपा के वर्तमान राजनीतिक वर्चस्व ने इस गठबंधन को अब क्षेत्रीय दलों की मजबूरी बना दिया है। यदि महाराष्ट्र के अपवाद को छोड़ दें तो अन्य क्षेत्रीय दल ऐसे भी नजर आते हैं, जो भविष्य में इस गठबंधन से जुड़ने के लिए लालायित रहेंगे। देश की वर्तमान राजनीतिक स्थिति में अन्य कोई राजनीतिक दल या गठबंधन राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन को चुनौती देता नजर नहीं आ रहा। यह कहना गलत नहीं होगा कि यह गठबंधन वाजपेयी की भाजपा को बहुत बड़ी देन है। 1999 से लेकर 2014 तक तीन सरकारों ने अपने पांच वर्षों के कार्यकाल को पूरा किया। इस दृष्टि से देश में राजनीतिक स्थिरता रही, लेकिन इन सभी गठबंधन सरकारों की राजनीतिक प्रकृति यह थी कि क्षेत्रीय दलों का बोलबाला बहुत अधिक बढ़ गया।

● दिल्ली से रेणु आगाल

एनडीए का ही रुतबा रहेगा

वैसे राजनीतिक गठबंधन पहले भी बने थे, लेकिन चाहे 1967 के चुनाव के बाद के गठबंधन हों या फिर 1977 के चुनाव से पहले का प्रयोग, ये दोनों ही अल्पकालीन तथा राजनीतिक पैमानों पर असफल प्रयास रहे। वास्तव में वर्तमान भारतीय राजनीति में 1989 के उपरांत गठबंधनात्मक सरकारों का एक नया चरण प्रारंभ हुआ, लेकिन विगत तीन दशाब्दियों का यह चरण एक समान नहीं रहा है। इसमें अनेक उतार-चढ़ाव आए हैं। इसीलिए हम गठबंधन के इस दौर को दो भागों में विभाजित करके देख सकते हैं। पहला भाग 1989 से लेकर 1999 तक का रहा जबकि केवल दस वर्षों के अंतराल में देश को पांच आम चुनावों का सामना करना पड़ा और इस दौरान सात सरकारें बनीं और बिगड़ीं। विश्लेषण की सुविधा के उद्देश्य से हम इस समय को 'अस्थिर गठबंधन सरकारों का दौर' कह सकते हैं। लेकिन इन दस वर्षों के दौरान जो राजनीतिक मंथन हुआ, उसके परिणामस्वरूप देश की प्रतिस्पर्धात्मक राजनीति में एक नया ध्रुवीकरण आया। यह ध्रुवीकरण 'मंडल, मंदिर और मार्केट' के परस्पर संघर्ष का परिणाम था, जिसने हमारी राजनीतिक व्यवस्था को एक नई दिशा प्रदान की।

नक्सलियों में गैंगवार

छत्तीसगढ़ सरकार और पुलिस के बड़े अधिकारियों का दावा है कि नक्सलियों के बीच बढ़ते आपसी मतभेद की वजह से अब वे अपने ही साथियों की हत्या करने लगे हैं। बस्तर के पुलिस अधिकारियों का कहना है कि नक्सलियों में पनप रहा विवाद गैंगवार का रूप ले रहा है। इसका मुख्य कारण नक्सलियों द्वारा मुखबिरी के शक में ग्रामीणों की हत्याएं और कैडर सदस्यों द्वारा लगातार सरेंडर करना हैं। बता दें कि गत दिनों पहले ही नक्सिलयों ने गैंगवार में गंगलूर थाना क्षेत्र के ईतावर गांव के जंगल में अपने ही डिवीजनल कमेटी के सदस्य और 10 लाख के ईनामी माओवादी मोड़ियम विज्जा की हत्या आपसी विवाद में कर दी थी। विज्जा के अलावा आपसी विवाद में मारे जाने वाले नक्सलियों में 3 लाख का ईनामी और जनताना प्रभारी लखु हेमला और साकिन कावनारगट्टा क्षेत्र का **राज्य स्तरीय दंडकारण्य** जोनल कमेटी का रेंज अध्यक्ष संतोष शामिल हैं।

अधिकारियों द्वारा साझा की गई जानकारी के अनुसार नक्सलियों ने इस वर्ष करीब '60 ग्रामीणों को पुलिस का मुखबिर' बताकर मौत के घाट उतार दिया। गृहमंत्री ताम्रध्वज साहू के नक्सलियों द्वारा 'ग्रामीणों की नृशंस हत्याएं उनके खात्मे का कारण बनेगी' के बयान के बाद अब राज्य पुलिस के अधिकारियों का दावा है कि पिछले एक महीने में 6 ईनामी नक्सलियों की हत्याएं उनके आपसी मतभेद और आशंकाओं के चलते हुई हैं। पुलिस अधिकारियों का कहना है कि निर्दोष ग्रामीणों को मुखबिर बताकर जिस तरह मारा जा रहा है उससे कुछ नक्सली अब अपने ही साथियों का विरोध करने लगे हैं। इस विरोध के चलते अब वे कैडर के लोगों पर अपनी धाक बनाए रखने के लिए एक-दूसरे की हत्याएं भी कर रहें हैं। इतना ही नहीं अधिकारियों का मानना है कि नक्सली अपने साथियों की हत्या उनके लड़कों द्वारा किए जा सरेंडर को रोकने के लिए भी कर रहे हैं। हत्याओं के माध्यम से वे सरेंडर करने की सोच रहे अन्य साथियों को चेतावनी भी देना चाहते हैं।

बस्तर के पुलिस महानिदेशक सुंदराज पी ने बताया, 'माओवादी संगठन में ग्रामीणों की हत्याओं को लेकर आपसी मतभेद अब धीरे-धीरे एक गैंगवार का रूप ले रहा है, जिसके कारण वे एक-दूसरे को मार रहे हैं। बस्तर पुलिस के पास पुख्ता जानकारी है कि ग्रामीणों पर हो रहे अत्याचार को लेकर आपसी विवाद में बीजापुर जिले में पिछले एक माह में 6 माओवादियों की हत्या हो चुकी है।'

आईजी बस्तर कहते हैं, 'कुछ दिन पूर्व नक्सलियों ने गंगलूर थाना क्षेत्र के ईतावर गांव के जंगल में अपने गंगालूर डिवीजनल कमेटी सदस्य और 10 लाख के ईनामी माओवादी मोड़ियम विज्जा की हत्या आपसी विवाद के चलते कर दी। विज्जा के साथ सीपीआई (माओवादी) के गंगालूर एरिया कमेटी सचिव दिनेश मोड़ियम के साथ विवाद हो गया था। विवाद बढ़ने के चलते दिनेश ने विज्जा पर हमला कर दिया और उसकी हत्या कर दी गई। सुंदराज और विभाग के **दूसरे अफसरों** ने जानकारी दी कि माओवादियों द्वारा लगातार की जा रही ग्रामीणों की हत्याओं से लोगों में गुस्सा बढ़ता जा रहा है। 'इससे माओवादिओं में निराशा बढ़ रही है और संगठन में एक गैंगवार जैसा माहौल बन रहा है।'

आईजी के अनुसार, माओवादियों की कुंठा का एक कारण उनके प्रति स्थानीय युवाओं में नक्सल के प्रति घटती लोकप्रियता भी है। विज्जा के अलावा आपसी विवाद में मारे जाने वाले नक्सलियों में 3 लाख का ईनामी और जनताना प्रभारी लखु हेमला और साकिन कावनारगट्टा क्षेत्र का राज्य स्तरीय दंडकारण्य जोनल कमेटी का रेंज अध्यक्ष संतोष शामिल हैं। संतोष भी 3 लाख रुपए का ईनामी नक्सली था। इनके अलावा जनमिलिशिया कमांडर कमलू पुनेम, जनमिलिशिया प्लाटून सेक्शन कमांडर संदीप उर्फ बुधराम कुरसम, एक अन्य जनताना सरकार अध्यक्ष दसरू मंडावी भी नक्सलियों की आपसी फूट के चलते ही मारे गए हैं।

बीजापुर जिले के पुलिस अधीक्षक कमलोचन कश्यप कहते हैं, 'प्रदेश में माओवादियों के डिवीजनल कमेटी लेवल के कमांडरों में आपसी तनाव लगातार बढ़ रहा है। इसका एक कारण नक्सली लड़कों और अन्य कैडर सदस्यों द्वारा सरेंडर और वहीं दूसरी युवा ग्रामीण माओवाद विचारधारा को अपनाने को तैयार नहीं होना है।' कश्यप ने कहा, 'यह जानकारी पुख्ता है कि नक्सलियों में मतभेद अब हिंसक रूप लेने लगा है। लेकिन यह स्थिति अभी नक्सलियों के डिवीजनल कमेटी तक ही सीमित है। उसके ऊपर राज्य स्तरीय नेतृत्व और सेंट्रल कमेटी में हालात सामान्य हैं।'

● **रायपुर से टीपी सिंह**

'बढ़ सकते हैं नक्सली हमले'

अधिकारियों में नक्सलियों की आपसी फूट को लेकर एक ओर जहां खुशी है, वहीं इस बात को लेकर शंका भी है कि आने वाले दिनों में उनके द्वारा हिंसक वारदातें बढ़ सकती हैं। विज्जा के मारे जाने के बाद सुरक्षाबलों को अब और अधिक अलर्ट रहने की हिदायत दी गई है। कश्यप कहते हैं, 'अपनी ओर से ध्यान भटकाने के लिए नक्सली आने वाले दिनों में हिंसक घटनाओं को अंजाम दे सकते हैं। इस संबंध में खुफिया सूचनाएं भी मिल रही हैं। सुरक्षाबल पूरी तरह से अलर्ट हैं।' कश्यप के अनुसार आशंका यह भी है कि नक्सलियों के बीच विवाद के चलते कुछ और भी माओवादी कमांडर मारे जा सकते हैं। बीजापुर एसपी ने यह साफ किया है कि ग्रामीणों को मारने और उनमें दहशत फैलाने के मामलों में आपसी मतभेद के चलते नक्सलियों में रंजिश लगातार बढ़ रही है।

जीत के बाद भी चुप्पी

राजस्थान में पंचायत चुनाव के सभी चरण पूरे हो चुके हैं। पहले और दूसरे दौर में इन चुनावों में कांग्रेस या भाजपा में से किस पार्टी का दबदबा रहा यह कहना बेहद मुश्किल है, क्योंकि ये चुनाव पार्टी सिंबल पर नहीं होते हैं। लिहाजा दोनों पार्टियां अपनी-अपनी जीत के दावे जरूर करती रहती हैं कि उनकी पार्टी के सरपंच ज्यादा जीते हैं। लेकिन पार्टियों के ये दावे तथ्यात्मक कम और हवाहवाई ज्यादा होते हैं। क्योंकि अधिकांश सरपंचों ने जीत के बाद चुप्पी साध ली है। हालांकि प्रदेश में सत्तारूढ़ कांग्रेस का दावा है कि पंचायत चुनाव में उसके समर्थक सरपंच अधिक जीते हैं। सरपंच किसी भी पार्टी के समर्थक रहे हों, लेकिन सरकार इसके लिए धन्यवाद का पात्र है कि कोविड-19 के इस दौर में उसने चुनाव को पूरी सतर्कता के साथ संपन्न करवाया है।

राजनीतिक प्रेक्षकों का मानना है कि ग्राम पंचायत चुनावों में हमेशा से ही अमूमन सत्तारूढ़ पार्टी ही ज्यादा फायदे में रहती है। क्योंकि ग्रासरूट से जुड़े पार्टियों के समर्थक इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं कि 'तालाब में रहकर मगर से बैर नहीं पालना' चाहिए। गांव का विकास चाहिए तो सत्तापक्ष से जुड़े प्रत्याशी को ही वे समर्थन देना उचित मानते हैं। इसलिए इन चुनावों में हमेशा से ही सत्तापक्ष से जुड़े कार्यकर्ता ही अपनी जीत का झंडा बुलंद करके घूमते हैं, लेकिन विपक्षी पार्टी से जुड़े कार्यकर्ता अपनी जीत का खुलकर ढिंढोरा भी नहीं पीट पाते हैं। इसकी सबसे बड़ी वजह है पंचायत के विकास के लिए आने वाला करोड़ों का बजट। यह बजट राज्य सरकार के माध्यम से ही पंचायतों में पहुंचता है।

विपक्षी पार्टियों से जुड़े लोग इन चुनावों में अपनी जीत के बाद ज्यादा हल्ला-गुल्ला भी नहीं करते हैं, क्योंकि उन्हें इस बात का अहसास होता है कि भले ही वे सत्तापक्ष से नहीं जुड़े हैं, लेकिन फिर भी काम उनका उसी से ज्यादा पड़ेगा। लिहाजा सत्तारूढ़ पार्टी से नरमी से पेश आना होगा। अगर ऐसा नहीं हुआ तो उनकी पंचायत के विकास कार्यों में भेदभाव हो सकता है। राज्य सरकार उनके काम में किसी ना किसी बहाने रोड़े अटका सकती है। विकास कार्यों का उनका बजट रुक सकता है। इसलिए कुछ अपवादों को छोड़कर विपक्षी पार्टियों की विचारधारा से जुड़े सरपंच सरकार के सामने अक्सर चुप्पी साधे ही रहते हैं। वहीं इन चुनावों में बड़े नेता भी ज्यादा दिलचस्पी नहीं दिखाते हैं।

जब राज्य में पंचायत चुनाव की घोषणा हुई तो किसी को भी यकीन नहीं था कि कोरोना जैसी महामारी के साए में पंचायत चुनाव भी हो सकते हैं लेकिन आयोग की टीम स्थानीय प्रशासन के जरिए मतदाताओं को यह विश्वास दिलाने में कामयाब हो गई कि यदि सोशल डिस्टेंसिंग का पालन करते हुए मतदाता सहयोग करेंगे तो 'सुरक्षित चुनाव' संभव हैं। इसी थीम को ध्यान में रखते हुए आयोग ने सभी कलेक्टर्स और पुलिस, मेडिकल के अधिकारियों के साथ मंत्रणा शुरू कर दी। पूरी टीम के प्रयासों का ही नतीजा रहा कि मतदाता न केवल घर से निकले बल्कि अपनी सरकार को भी निर्भीक होकर चुन पाए।

राज्य में हुए पंचायत चुनाव को दो तरीकों से देखा जा सकता है। प्री-कोविड यानी जनवरी माह में हुए प्रथम चरण के चुनाव और पोस्ट कोविड यानी सितंबर-अक्टूबर के चुनाव। सामान्य हालात में हुए प्रथम चरण के चुनावों में 83.85 प्रतिशत मतदान हुआ। कोरोना के संक्रमण के दौरान लग रहा था कि मतदाता मतदान के लिए घर से बाहर नहीं निकल पाएंगे लेकिन आयोग द्वारा कोरोना के तैयार माइक्रो मैनेजमेंट प्लान को देख न केवल मतदाता बाहर निकले बल्कि रिकॉर्ड 82.25 फीसदी मतदान कर साबित कर दिया कि आयोग द्वारा संक्रमण के नियंत्रण के लिए तैयार रणनीति उन्हें खासी रास आई है। पंचायत के प्री और पोस्ट कोविड को भी देखा जाए तो आठों चरणों को मिलाकर 82.78 प्रतिशत लोगों ने मतदान किया है।

आयोग की मंशा थी कि कोई भी मतदाता बिना मास्क के मतदान केंद्रों में प्रवेश नहीं करे ताकि संक्रमण का प्रसार ना हो। मतदाताओं ने भी इस मंशा को बखूबी समझा और मास्क लगाकर ही मतदान केंद्रों पर पहुंचे। पहले चरण में आयोग को लगा कि पुरुष तो मास्क लगाकर आ रहे हैं लेकिन महिलाएं बतौर मास्क अपने पल्लू या आंचल को काम में ले रही हैं। इससे संक्रमण की आशंका को देख अगले चरणों के लिए आयोग ने 'घूंघट में भी मास्क' का नारा दिया। मतदाता सतर्क और सजग थे, आयोग के नारे को हाथोंहाथ लिया। यही वजह रही कि तीसरे और चौथे चरण में मतदाताओं की कतारों में महिला मतदाता घूंघट होने पर भी मास्क में नजर आईं। इस बार के पंचायत चुनाव पर पूरे देश की नजर थी। आयोग ने कोरोना संक्रमित व्यक्ति को मतदान करने और उम्मीदवार बनने का मौका दिया। आयोग ने इसके लिए विशेष रणनीति बनाई और मेडिकल द्वारा सुझाए सभी प्रोटोकॉल की पालना के साथ सुरक्षित मतदान का मौका भी दिया।

● **जयपुर से आर.के. बिन्नानी**

इन चुनावों में पता चलेगा दबदबा

अब जल्द ही प्रदेश में जिला परिषद और पंचायत समितियों समेत जयपुर, जोधपुर व कोटा के 6 नगर निगमों तथा 129 स्थानीय निकाय के चुनाव होने वाले हैं। ये चुनाव पार्टी सिंबल पर होंगे। राज्य की असली राजनीति का पता ही इस चुनाव में चल पाएगा। क्योंकि इन चुनावों के जरिए जिला प्रमुख, प्रधान और निकाय प्रमुखों का चुनाव होगा। जिला परिषदों, पंचायत समितियों और निकायों में बनने वाले बोर्ड की संख्या से प्रदेश में पार्टी का दबदबा आम जनता के सामने आता है। जल्द ही इन चुनावों का बिगुल बजने वाला है। उसके बाद प्रदेश में राजनीतिक सरगर्मियां परवान चढ़ेंगी।

आरे बचाया

उद्धव ठाकरे की अगुवाई वाली महाराष्ट्र सरकार ने मुंबई की आरे कॉलोनी में प्रस्तावित, विवादास्पद मेट्रो कार डिपो को दूसरी जगह ले जाने का फैसला करके, कई वर्षों से चली आ रही अनिश्चितता पर विराम लगा दिया है। वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के ज़रिए राज्य को संबोधित करते हुए, मुख्यमंत्री ठाकरे ने कहा कि अंडरग्राउंड कोलाबा-बांद्रा-एसईईपीजेड मेट्रो के लिए, कार डिपो को गोरेगांव की आरे कॉलोनी से हटाकर, कांजुरमार्ग ले जाया जाएगा। आरे कॉलोनी को मुंबई की हरियाली का फेफड़ा कहा जाता है। ठाकरे ने कहा, 'इस बारे में बहुत सारे सवाल हैं, कि इसका लागत पर क्या असर पड़ेगा, और प्रोजेक्ट पर जो पैसा पहले ही खर्च हो चुका है उसका क्या। मैं इन सबका जवाब दूंगा। कांजुरमार्ग की जमीन राज्य सरकार की मिल्कियत है, और इसे जीरो लागत पर प्रोजेक्ट के लिए दिया जाएगा।' उन्होंने आगे कहा, 'आरे में जमीन के भराव और एक बिल्डिंग बनाने में, 100 करोड़ रुपए खर्च किए गए हैं। उस बिल्डिंग का इस्तेमाल हम किसी अच्छे काम के लिए करेंगे।'

ठाकरे ने ये भी कहा कि सरकार ने फैसला किया है कि वन घोषित किए जाने वाले इलाके को पहले घोषित किए गए 600 एकड़ से बढ़ाकर 800 एकड़ कर दिया गया है। उन्होंने आगे कहा, 'ऐसा करने में आरे कॉलोनी में पहले से रह रहे, आदिवासियों के अधिकारों का, कोई अतिक्रमण नहीं होगा।' फैसले के कुछ ही घंटे बाद पर्यावरण मंत्री, और मुख्यमंत्री के बेटे आदित्य ठाकरे ने, जो पहले 'आरे बचाओ' मुहिम चला चुके थे, दो शब्दों का ट्वीट किया- 'आरे बचाया।' 33.5 किलोमीटर लंबे कोलाबा-बांद्रा-एसईईपीजेड मेट्रो कॉरिडोर को कार्यान्वित कर रही राज्य सरकार की एजेंसी मुंबई मेट्रो रेल कॉरपोरेशन (एमएमआरसी) के अधिकारियों ने पहले कहा था कि इस स्टेज पर कार शेड को, आरे कॉलोनी से कहीं और ले जाने से परियोजना की लागत 2,000 करोड़ रुपए बढ़ जाएगी और परियोजना में देरी भी होगी।

कोलाबा-बांद्रा-एसईईपीजेड मेट्रो, शहर का पहला और अभी तक एकमात्र, पूरी तरह भूमिगत मेट्रो कॉरिडोर होगा। अभी तक, अथॉरिटीज ने परियोजना के लिए सुरंग खोदने का 80 प्रतिशत, और कुल सिविल कार्य का 60 प्रतिशत काम पूरा कर लिया है। प्रोजेक्ट की मूल अनुमानित लागत 23,136 करोड़ रुपए थी, लेकिन बार-बार देरी और आरे कार शेड में काम रुकने के कारण, ये लागत अब बढ़ाकर 32,000 करोड़ रुपए कर दी गई है। अधिकारी उम्मीद कर रहे थे कि अगले साल जून तक, वो आरे कॉलोनी से बांद्रा कुर्ला कॉम्प्लेक्स तक के कॉरिडोर को आंशिक रूप से चालू कर देंगे, लेकिन अलाइनमेंट में इस नए बदलाव से अब फिर से देरी हो सकती है। आरे कॉलोनी 1949 में गोरेगांव में, 1,287 हेक्टेयर जमीन में स्थापित की गई थी। ये महाराष्ट्र के डेयरी विकास विभाग के अधिकार क्षेत्र में आती है।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार, आरे की कुल जमीन में से 430 हेक्टेयर जमीन राज्य और केंद्र सरकार के विभिन्न विभागों और संस्थानों को आवंटित की गई है। इसके अलावा इलाके में डेयरी विभाग की 30 स्थाई इकाइयां हैं और लगभग 1,000 एकड़ के अन्य इलाके में करीब 27 आदिवासी बस्तियां हैं। जिस समय से आरे कॉलोनी में कार शेड्स का प्रस्ताव सामने आया, तभी से एमएमआरसी के प्लान के खिलाफ, पर्यावरण विदों, राजनेताओं और आम नागरिकों की ओर से विरोध की लहरें उठती रही हैं। इस योजना का प्रस्ताव पहली बार 2012 में सामने आया, लेकिन 'आरे बचाओ' आंदोलन ने 2015 में ही जोर पकड़ना शुरू किया, जब योजना टेंडर की स्टेज पर आ गई थी, और पैसों का प्रबंध हो चुका था, जिसकी वजह से अधिकारियों ने चिंता जताई कि इस स्टेज पर किसी भी बदलाव से, समय और धन दोनों मामलों में, प्रोजेक्ट की लागत में भारी बढ़ोतरी हो जाएगी।

देवेंद्र फड़णवीस की अगुवाई वाली भाजपा-शिवसेना सरकार भी, आरे कॉलोनी में कार शेड बनाने की योजना पर आगे बढ़ना चाहती थी, हालांकि शिवसेना इसके खिलाफ थी। उसके बाद के सालों में एमएमआरसी की योजना को **रुकवाने के लिए कार्यकर्ताओं** ने कई अदालतों के दरवाजे खटखटाए। पिछले साल नगर निगम के वृक्ष प्राधिकरण की ओर से आरे कॉलोनी में 2,646 पेड़ काटे जाने की मंजूरी के बाद इस मामले ने फिर हवा ले ली और योजना के विरोध में व्यापक प्रदर्शन हुए। शिवसेना के नेताओं ने जिनमें आदित्य ठाकरे भी शामिल थे, इन प्रदर्शनों का समर्थन किया। पिछले साल अक्टूबर में उस जगह पर काफी ड्रामा हुआ, जब बॉम्बे हाईकोर्ट से अपने पक्ष में फैसला आने के बाद, एमएमआरसी अधिकारी आधी रात में पेट काटने पहुंच गए, जबकि कार्यकर्ता उस जगह प्रदर्शन कर रहे थे। बहुत से कार्यकर्ताओं को पुलिस ने हिरासत में ले लिया। पिछले महीने राज्य सरकार ने उन सभी पर्यावरण कार्यकर्ताओं के खिलाफ दर्ज मुकदमे वापस लेने की घोषणा कर दी, जो आरे कार डिपो का विरोध कर रहे थे।

● **बिन्दु माथुर**

800 एकड़ जमीन संरक्षित वन क्षेत्र घोषित

मुंबई के गोरेगांव स्थित आरे फॉरेस्ट को बचाने की मुहिम में आमजन से लेकर बॉलीवुड सितारे तक शामिल रहे हैं। महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री उद्धव ठाकरे ने ऐलान किया कि आरे में मेट्रो कार शेड नहीं बनाया जाएगा। इसे संरक्षित वन क्षेत्र घोषित किया गया है। आरे की जगह अब कांजुरमार्ग में मेट्रो शेड का निर्माण होगा। मुख्यमंत्री ने कहा कि जगह बदलने के बाद मेट्रो शेड बनाने के खर्च में इजाफा नहीं होगा, क्योंकि सरकार के पास यहां पहले से ही जमीन है। पिछले साल सितंबर-अक्टूबर में आरे मेट्रो शेड के मामले ने तूल पकड़ लिया था, क्योंकि पर्यावरण एक्टिविस्ट इसका विरोध कर रहे थे। सरकार यहां 2700 पेड़ काटकर मेट्रो शेड बनाना चाहती थी। इसी बात को लेकर सरकार और एक्टिविस्ट आमने-सामने आ गए थे। उद्धव ठाकरे ने कहा कि मेट्रो शेड को लेकर अनिश्चितता की स्थिति अब खत्म हो चुकी है। आरे में बायोडायवर्सिटी की सुरक्षा जरूरी है। शहरी इलाके के पास यहां 800 एकड़ जंगल है। यह मुंबई का नेचुरल फॉरेस्ट कवर है। आरे में जो इमारत पहले से ही बन चुकी है, उसका इस्तेमाल किसी और सामुदायिक मकसद से किया जाएगा।

प्रियंका बनी असली विपक्ष

उत्तर प्रदेश में बाजी पलट रही है! प्रियंका गांधी ने साबित कर दिया है कि राज्य में असली विपक्ष वही हैं। कांग्रेस के कार्यकर्ता जिस बूस्टर डोज का इंतजार कर रहे थे वह उन्हें मिल गया है। हाथरस जाते समय पुलिस की लाठियों के सामने जिस तरह प्रियंका आईं उसने लोगों को इंदिरा गांधी की याद दिला दी। इंदिरा गांधी की कई छवियां जनता के और खासतौर पर कांग्रेस कार्यकर्ताओं के मन में स्थाई हैं। संघर्ष के दिनों की। 1977 की। जब पहली बार कांग्रेस केंद्र की सत्ता से बाहर हुई थी। इनमें पहली छवि है इंदिरा गांधी की हाथी पर बैठकर बेलछी जाने की। और दूसरी है उसी साल गिरफ्तारी के बाद दिल्ली से हरियाणा ले जाने का विरोध करते हुए रेलवे क्रॉसिंग पर बनी पुलिया पर बैठ जाने की। वह भी 3 अक्टूबर था। और इस बार भी 43 साल बाद का एक 3 अक्टूबर। इंदिरा गांधी की पोती पुलिस की लाठियों के सामने आ गई। अपने कार्यकर्ताओं को बचाने के लिए पुलिस की हमला करती लाठी को उसने अपने हाथों पर ले लिया। भारत की जनता के साथ राजनीतिक कार्यकर्ता को भी अपना नेता लड़ता हुआ ही पसंद आता है। बहुत प्रभावित करता है।

राहुल गांधी का शांत और संयत व्यवहार अलग मानवीय गुणों से भरा हुआ है। मगर हमारे मन में घोड़े पर सवार एक हाथ से लगाम थामे और दूसरे से तलवार लहराती झांसी की रानी की छवि ही अंकित है। प्रियंका ने अपना यह रूप सायास नहीं गढ़ा है वे एक स्नेहिल मां, बहन, बेटी और नेता हैं। मगर **दादी इंदिरा** का असर उन पर इतना ज्यादा है कि किन्हीं खास मौकों पर जैसा वाजपेयी जी ने 1971 में कहा था कि इंदिरा जी दुर्गा बन गईं, वैसे ही उनकी पोती भी उन्हीं तेवरों में आ जाती हैं। कम ही लोगों को मालूम होगा कि उनके नजदीक के कुछ लोग उनकी गैरमौजूदगी में उन्हें झांसी की रानी कहते हैं। और उनके सामने उन्हें संबोधन के लिए 'भइयाजी' तो कहा ही जाता है।

कांग्रेस को उप्र में तीन दशक से ज्यादा ऐसे ही किसी करिश्मे की तलाश थी। बिहार में भी है। वहां भी कांग्रेस इसी तरह चौथे नंबर की पार्टी बनी हुई है। मगर फर्क यह है कि उप्र नेहरू गांधी परिवार का घर है। इसलिए यहां चौथे नंबर की पार्टी होना उसकी कसक को और बढ़ा देता है। मगर अब स्थिति यह है कि कांग्रेस चौथे नंबर की पार्टी विधानसभा में तो है मगर सड़क पर वह मुख्य विपक्षी दल बन गई है। मायावती की बसपा तो कहीं नजर ही नहीं आ रही है। अखिलेश यादव की सपा की मौजूदगी भी खाली खानापूर्ती है। कांग्रेस जिस जज्बे के साथ उप्र से लड़ रही है वह बताता है कि इस बार विधानसभा चुनाव में वही भाजपा के मुकाबले होगी।

हाथरस में दलित की बेटी के साथ हुए भारी जुल्म के बाद लोगों को उम्मीद थी कि कम से कम इस मामले में तो मायावती घर से बाहर निकलेंगीं। लेकिन खुद को दलित की बेटी कहकर राजनीति करने वाली मायावती ने ट्वीट और बाइट के अलावा कुछ नहीं किया। इस बात को लेकर दलित खुद को छला हुआ महसूस कर रहे हैं। दलितों की एकजुटता की वजह से ही मायवती चार बार उप्र की मुख्यमंत्री बनीं। मगर अब दलितों का मोहभंग हो गया है। वे कांग्रेस की तरफ वापस मुड़ सकते हैं। प्रियंका में उन्हें उम्मीद कि किरण दिखाई दे रही है। अगर ऐसा होता है तो उत्तर प्रदेश का ब्राह्मण जो बिल्कुल फैंस पर बैठा है वह भी अपनी पुरानी पार्टी कांग्रेस की तरफ वापस आ सकता है।

और सबसे बड़ा धमाका, नया इतिहास होगा उप्र में यादवों का कांग्रेस के साथ आना। पिछले साढ़े तीन सालों में यादवों को बहुत घेरा गया। इससे पहले कभी यादव इतना निरूपाय नहीं हुआ था। 30 साल पहले जब उसने उप्र और बिहार कहीं सत्ता का स्वाद भी नहीं चखा था तब भी कृषि प्रधान जातियों में वह उत्तर भारत में सबसे बेहतर स्थितियों में था। कभी पुलिस या सरकार ने उसे टारगेट करके प्रताड़ित नहीं किया था। मगर इस बार तो मुख्यमंत्री रहे, सभ्य सुसंस्कृत अखिलेश यादव को टोंटी चोर जैसे घटिया आरोप झेलने पड़े। यादवों में बड़ा मैसेज यह गया है कि अखिलेश न **खुद को बचा पाए** न हमें बचा पा रहे हैं। और फिर जब उप्र का यादव बिहार से अपनी तुलना करता है तो उसे और निराशा होती है। वहां लालू यादव जेल में हैं। मगर फिर भी यादव के नाम पर सामान्य यादवों पर अत्याचार नहीं किया जा सकता। एनकाउंटर का तो सवाल ही नहीं। ऐसे में यादव अपने विकल्प के बारे में सोच रहा है। और जहां तक मुसलमान का सवाल है उसे अब मायावती और अखिलेश से कोई उम्मीदें नहीं बची हैं। अखिलेश जब सत्ता में थे तभी मुजफ्फरनगर कांड हुआ था। और अखिलेश एवं मायवती दोनों में से कोई वहां गया तक नहीं था। ऐसे में कांग्रेस के नेताओं की बांछें खिलना स्वाभाविक है। जैसे उप्र के बुंदेलखंड वाले इलाके में कहा जा रहा है 'हौंसे फूले हम फिरत, होत हमाओ ब्याह!'

● **लखनऊ से मधु आलोक निगम**

हाथ पर हाथ धरे बैठे कांग्रेसी

कांग्रेसी सोचते हैं जैसे 2004 में सोनिया गांधी ने गांव-गांव की खाक छानकर सत्ता हमारे हमारे हाथों में रख दी थी वैसे ही इस बार प्रियंका दीदी कर देंगी। लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि 2022, 2004 से बहुत अलग होगा। तब राजनीति में इतने बड़े दांव नहीं थे। इस तरह सांप्रदायिकता नहीं थी। जाति के सवाल इतने पैने नहीं हुए थे। अगर वे मेहनत नहीं करेंगे, कार्यकर्ताओं का विश्वास नहीं जितेंगे तो अकेली प्रियंका के भरोसे जनता का उनके साथ आना मुश्किल है। 2004 का अनुभव भी जनता के लिए बहुत अच्छा नहीं है। गांधी-नेहरू परिवार के नाम पर उसने वोट दिया। मगर दस साल तक जिन मंत्रियों और बड़े नेताओं ने सत्ता सुख लिया उन्होंने कभी जनता या कांग्रेस कार्यकर्ता का हाल नहीं पूछा। सोनिया गांधी ने सत्ता लाकर कांग्रेसियों के हाथों में रख दी थी।

जाति भरोसे

चुनाव आयोग ने बहुप्रतीक्षित बिहार चुनाव की तारीखों की घोषणा कर दी है। 28 अक्टूबर से 7 नवंबर तक तीन चरणों में मतदान होगा, जबकि 10 नवंबर को मतगणना होगी। खास बात है कि चुनाव दशहरा बाद और दीपावली से पहले होंगे। यानी त्यौहारों पर कोई असर नहीं पड़ेगा। इस बार नीतीश कुर्सी बरकरार रख लेते हैं, तो वह बतौर लोकप्रिय मुख्यमंत्री गुजरात के नरेंद्र मोदी, ओडिशा के नवीन पटनायक और पश्चिम बंगाल के ज्योति बसु के रिकॉर्ड की बराबरी कर लेंगे। फिलहाल एनडीए में सीटों के बंटवारे को अंतिम रूप दिया जाना बाकी है। अभी अंतिम रूप से तय नहीं है कि स्व. रामविलास पासवान की एलजेपी गठबंधन में है या बाहर। जीतनराम मांझी पहले ही महागठबंधन छोड़ चुके हैं और उन्हें उनके हिस्से की सीटें भी मिल गई हैं।

राज्य की सियासत में जातिगत समीकरण हमेशा से प्रभाव रखते रहे हैं। एनडीए और महागठबंधन एक-एक सीट पर जाति का गणित देखकर चुनावी जमावट बना रहे हैं। लालू यादव पिछड़े वर्गों, मुस्लिमों और यादवों के समर्थन से सत्ता में आए थे, जो राज्य की आबादी का दो-तिहाई हिस्सा हैं। पूर्व प्रधानमंत्री वीपी सिंह के नेतृत्व वाले **जनता दल सरकार** ने ओबीसी आरक्षण दिया, जिससे पार्टी ने बिहार में कांग्रेस को सत्ता से बाहर कर दिया। जातिगत समीकरण को संतुलित कर लालू 15 वर्षों तक सत्ता में बने रहे। उनके मुस्लिम-यादव संयोजन, जिसे एमवाई कहा जाता है, उनके लिए सत्ता की कुंजी साबित हुआ। हालांकि यादवों को अधिक महत्व देने से पिछड़ी जातियों का लालू से मोहभंग हो गया।

साल 2005 में नीतीश कुमार और सुशील मोदी ने जातिगत समीकरणों की नए सिरे से जमावट की और लालू सरकार को जंगल राज बताते हुए उसे खत्म कर दिया। नीतीश कुर्मी समुदाय से आते हैं, जो राज्य की आबादी का 4 प्रतिशत हैं। उन्होंने दो वोट बैंक बनाए, एक को महादलित और दूसरे को अति पिछड़ी जाति ठहराया। उन्होंने दोनों के लिए विशिष्ट योजनाएं तैयार कीं, जिससे सत्ता तो मिली ही, लोकप्रियता भी बढ़ी। इन दोनों श्रेणियों में राज्य की आबादी का 34 प्रतिशत हिस्सा है। हालांकि 15 प्रतिशत आबादी वाले सामान्य वर्ग को ये रास नहीं आया, जिसका असर 2010 के विस और 2019 के लोकसभा चुनावों में दिखाई देता है।

एनडीए में पासवान के अलावा दलित वोटों (6 प्रतिशत) को भी लाया गया है। 2019 के लोकसभा चुनाव में एनडीए को 54.3 प्रतिशत वोट शेयर मिला, जो उसके आधार (लगभग 34 प्रतिशत+15 प्रतिशत+6 प्रतिशत) के बराबर था। इधर, लालू यादव की आरजेडी मुस्लिम और यादव का संयोजन बनकर रह गई है, जिसकी आबादी 31 प्रतिशत है। जब मुकाबले सीधे हो रहे हों, तो ये आंकड़े जीतने में मददगार नहीं हो सकते। ऐसे में आरजेडी के नेतृत्व वाले महागठबंधन ने 2019 के लोकसभा चुनावों में सिर्फ 28.3 प्रतिशत वोट शेयर हासिल किया। 2005 और 2010 के विस चुनावों में आरजेडी के नेतृत्व वाले महागठबंधन का वोट शेयर क्रमशः 31 और 26 प्रतिशत था। 2014 के लोकसभा चुनाव में ये आंकड़ा 30 प्रतिशत था।

2015 के विस चुनाव इस मायने में खास थे कि आरजेडी के गठबंधन में जेडीयू भी थी। नीतीश एनडीए छोड़ चुके थे। नीतीश के आने से महागठबंधन ने 43 प्रतिशत वोट शेयर हासिल किए थे। वैसे देखा जाए तो बिहार में कई पार्टियों ने अक्सर सहयोगी बदले हैं। जेडीयू 2010 के विधानसभा चुनावों में भाजपा के साथ थी, तो 2014 के लोकसभा में अकेले, 2015 में विस चुनाव में आरजेडी के साथ, तो 2019 के लोकसभा चुनाव में भाजपा के साथ हो गई। हालांकि, जातिगत समीकरणों का प्रभाव इतना गहरा है कि पार्टियों के बदलते रूख के बावजूद उनके समर्थक जाति वर्ग स्थिरता रखते हैं। यानी जो जाति, वर्ग, समुदाय जिसके साथ रहा है, उसके साथ ही रहेगा, हां थोड़ा बदलाव होता रहता है। जैसे सवर्ण भाजपा के साथ, तो कुर्मी-कोइरी जेडीयू के साथ, वहीं यादव हमेशा आरजेडी के समर्थन में दिखेंगे। महापिछड़ा वर्ग जेडीयू और भाजपा के साथ होते हैं। एलजेपी को दलित का साथ मिलता रहा है।

2014 में जब जेडीयू ने अकेले चुनाव लड़ा, तो उसका वोट शेयर घटकर 16 प्रतिशत रह गया था, जो **महापिछड़ा, कुर्मियों** और महादलित वोटों का लगभग आधा है। भाजपा और उसके साथी ने अन्य जाति को साथ बनाए रखा और उच्च जाति व दलितों के साथ उसने 39 प्रतिशत वोट शेयर हासिल किया। इस साल भी चुनाव में जातिगत समीकरणों का प्रभाव होना ही है। ऐसे में एनडीए और महागठबंधन की तरफ से एक-एक सीट पर समीकरणों को ध्यान में रखकर प्रत्याशी के नाम तय होंगे, जिनकी सूची जल्द ही हम सबके सामने होगी। शुरुआती जनमत सर्वेक्षणों में एनडीए को दो-तिहाई बहुमत के संकेत हैं। विपक्ष को करिश्माई लालू यादव की याद आ रही है, जो फिलहाल जेल में हैं। वहीं रामविलास पासवान के निधन के बाद जदयू के लिए रास्ता साफ हो गया है।

● **विनोद बक्सरी**

बिहार के चुनाव में दिखेगा कई विषयों का प्रभाव

बिहार के चुनाव में कई विषयों का प्रभाव देखने को मिलेगा। इसमें नेतृत्व रेटिंग भी एक विषय है। मतदाताओं के लिए लीडरशिप रेटिंग मायने रखती है। 2014 के लोकसभा चुनावों में नरेंद्र मोदी की शानदार जीत के बाद ऐसी प्रवृत्ति सामने आई है, जिसमें पूरा चुनाव एक चेहरे के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। बिहार में जाति का गणित भी देखने को मिलेगा। नीतीश ने सोशल री-इंजीनियरिंग के जरिए बिहार से लालू राज को उखाड़ फेंका था। उन्होंने लालू की पार्टी के एमवाय (मुस्लिम-यादव) वोटबैंक को कम करने उच्च जाति, गैर यादव ओबीसी और दलितों का व्यापक सामाजिक गठबंधन बनाया था। ये देखना होगा कि उनके बेटे इस एमवाय टैग से कैसे निकलकर नए जातिगत समीकरण तैयार कर पाते हैं। इसके लिए उन्हें अन्य जाति और समुदाय समूहों को ज्यादा मौके देने होंगे। एनडीए को ऐसे जाति समूहों का समर्थन है, जो राज्य की आबादी का 60 प्रतिशत हैं, जबकि महागठबंधन के पास 40 प्रतिशत है। इसे वोट शेयर में देखें तो 75 प्रतिशत में से एनडीए को 45 और महागठबंधन को 30 प्रतिशत वोट शेयर मिलता है।

अपने ही जाल में फंसा चालबाज चीन

चीन की साम्यवादी तानाशाही अपनी आक्रामक नीतियों के दम पर विस्तारवाद को बढ़ावा दे रही है और फिर भी उसकी मंशा है कि उसे शांतिप्रिय देश के रूप में देखा जाए। चीनी विदेश मंत्री वांग यी ने हाल में दावा किया कि अपने 5,000 साल के इतिहास में आक्रामकता और विस्तारवाद कभी चीन के जीन में नहीं रहे। एक पुरानी कहावत है कि आप जैसा बोते हैं, वैसा ही काटते भी हैं। चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग बहुत सख्ती से चीन केंद्रित वैश्विक ढांचा बनाना चाहते हैं। उनकी कोशिशों का वैश्विक स्तर पर प्रतिरोध भी हुआ और अमेरिका के साथ टकराव भी बढ़ा। इससे चीन के अंतरराष्ट्रीय अलगाव की आशंकाएं बढ़ गई हैं। भारत के साथ सीमा पर तनातनी शी की अनुत्पादक नीतियों को बेहतर तरीके से दर्शाती है।

अप्रैल-मई में जिनपिंग ने भारत की उत्तर पूर्वी सीमा पर अपनी सेना को चुपके से घुसपैठ करने का निर्देश दिया। इसके पीछे उनकी मंशा एशिया में भारत के कद को घटाने और चीनी दबदबे को बढ़ाने की थी। हालांकि यह दांव उलटा ही पड़ता दिख रहा है। लद्दाख के ऊंचे इलाकों में निर्जन जमीन हथियाने की चीनी मंशा को भारत की ओर से कड़ी चुनौती मिली। इसने चीन की क्षमताओं और ताकत को लेकर शी के समक्ष विकट स्थितियां पैदा कर दी हैं। इस पूरे घटनाक्रम का सार यही है कि शी ने दुनिया में अगले बड़े टकराव के बीज बो दिए हैं।

दुनिया की एक तिहाई से अधिक आबादी और वैश्विक अर्थव्यवस्था में करीब 20 प्रतिशत हिस्सेदारी रखने वाले भारत और चीन के बीच रिश्ते अंतरराष्ट्रीय संबंधों के लिहाज से बहुत महत्वपूर्ण हैं, लेकिन फिलहाल दोनों के रिश्ते तल्ख बने हुए हैं। जब हिमालयी क्षेत्र में युद्ध का साया गहरा रहा हो, तब शी ने हाल में कम्युनिस्ट पार्टी, सरकार और सैन्य नेतृत्व को भारत के साथ सीमा पर अपनी स्थिति मजबूत बनाने और सीमा सुरक्षा सुनिश्चित करने का निर्देश दिया।

लद्दाख में सीमा रेखा के इर्द-गिर्द कई मोर्चों पर चीनी सेना द्वारा धोखे और हैरत में डालने वाले हमले ने भारत को हतप्रभ कर दिया। हालांकि शुरुआती दौर में चीनी सेना को मिली बढ़त के बाद भारत के जबरदस्त सैन्य पलटवार ने चीन को पीछे खदेड़ दिया। इस दौरान तीन घटनाक्रमों ने भारत के खिलाफ शी की सैन्य योजना के तिलिस्म को तोड़ने का काम किया। ऊंचे इलाकों में छिटपुट संघर्ष की स्थिति में भारतीय सेना चीनी सेना की अनुभवहीनता पर भारी पड़ती है।

चीनी सेना ने आखिरी लड़ाई 1979 में वियतनाम में लड़ी थी, जहां उसे शर्मसार होना पड़ा था। इन तीन घटनाक्रमों में पहला यह है कि भारत ने भी सीमा पर चीन के बराबर सैन्य तैनाती की हुई है। यह किसी भी नए उकसावे पर करारा जवाब देने की उसकी उत्कंठा को ही दर्शाता है। भारत ने सैन्य जमाव के साथ ही भीषण सर्दियों के दौरान रसद आपूर्ति के लिए भी पूरी तैयारी कर ली है। दूसरा घटनाक्रम गलवान घाटी में भारतीय जवानों द्वारा चीनी सेना को करारा सबक सिखाने से जुड़ा है। गलवान की झड़प में चीन को करीब चार दशक बाद अपने सैनिक गंवाने पड़े।

यह शी के लिए शर्मिंदगी का सबब बना, क्योंकि भारत ने तो अपने 20 सैनिकों की शहादत को नमन किया, लेकिन चीन अभी तक अपने हताहत सैनिकों की संख्या को लेकर चुप्पी साधे हुए है। फिर अगस्त के अंत में इंडियन स्पेशल फोर्सेज ने पैंगोंग झील के दक्षिणी हिस्से में एक ऊंची चोटी पर कब्जा कर चीन को चकित कर दिया। भारतीय सैनिकों ने चीनी सेना की नाक के नीचे से रणनीतिक महत्व की चोटी हथिया ली। इसमें चीन के लिए खासा अपमानजनक पहलू यह था कि यह सैन्य टुकड़ी विशेष रूप से भारत में रह रहे निर्वासित तिब्बतियों से बनी है। बारूदी सुरंग की चपेट में आकर शहीद एक तिब्बती सैनिक के विधिवत अंतिम संस्कार ने चीन के जले पर और नमक ही छिड़का। इस अंत्येष्टि का संदेश साफ था कि भारत चीन के खिलाफ तिब्बत का वैसे ही उपयोग करेगा, जैसे चीन भारत के विरुद्ध पाकिस्तान का करता है।

विशाल तिब्बत के पठार का इलाका आकार में पश्चिमी यूरोप से भी बड़ा है। 1951 में माओ द्वारा इसे हड़पने से पहले यह भारत और चीन के बीच दीवार की तरह खड़ा था। तब से चीन ने उसे उत्पीड़न की प्रयोगशाला बना रखा है। यहां वह उन्हीं तौर-तरीकों को आजमाता है जो उसने शिनझियांग, भीतरी मंगोलिया और हांगकांग में अपनाए। दलाई लामा तो यहां तक कह चुके हैं कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने तिब्बत को धरती पर नरक बना दिया है। ऐसे में हैरानी नहीं कि ऑल-तिब्बतन स्पेशल फ्रंटियर फोर्स की दिलेरी ने दुनिया का ध्यान अपनी ओर खींचा। इस फोर्स की स्थापना 1962 में भारत-चीन युद्ध के बाद हुई थी। अपनी मातृभूमि पर चीनी कब्जे के खिलाफ लड़ाई का जज्बा तिब्बतियों को इस बल से जुड़ने के लिए प्रेरित करता है।

● **ऋतेन्द्र माथुर**

शी जिनपिंग भारत के खिलाफ युद्ध का बिगुल बजाएंगे?

शी को पता चल रहा होगा कि भारत के खिलाफ संघर्ष छेड़ना भले ही आसान रहा हो, लेकिन उसे किसी तार्किक परिणीति पर पहुंचाना टेढ़ी खीर है। अपनी चिरपरिचित शैली के अनुसार शी ने खुले युद्ध के बजाय मिश्रित आक्रामकता वाली राह चुनी। बिल्कुल दक्षिण चीन सागर की तरह, जहां परंपरागत और गैर-पारंपरिक तिकड़मों का इस्तेमाल किया गया। दक्षिण चीन सागर में तो शी ने बिना एक भी गोली चलाए उसका नक्शा बदलने में कामयाबी हासिल कर ली, लेकिन यही रणनीति हिमालयी क्षेत्र में आजमाने से खतरनाक गतिरोध की स्थिति बन गई। क्या इस गतिरोध को तोड़ने के लिए शी भारत के खिलाफ युद्ध का बिगुल बजाएंगे? युद्ध से शी को निर्णायक जीत मिलने के आसार नहीं हैं। इसका परिणाम गतिरोध के रूप में ही निकलेगा, जिसमें दोनों पक्षों को ही क्षति उठानी पड़ेगी, लेकिन चीन की साख पर भारत की तुलना में बड़ा बट्टा लगेगा। यही वजह है कि शी भारत से जंग में उलझे बिना दबाव बनाकर ही जीतने की जुगत में लगे हैं। ऐसे दौर में जब भारतीय अर्थव्यवस्था कोरोना संकट के कारण अपने सबसे खराब दौर से उबरने में जुटी है, तब शी ने भारत को राष्ट्रीय सुरक्षा पर अधिक संसाधन खर्च करने के लिए मजबूर कर दिया है।

अमेरिका का सबसे विवादित चुनाव!

अमेरिका अपने इतिहास के सबसे विवादित चुनाव के मुहाने पर खड़ा है। राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने राष्ट्रपति चुनाव को एक ऐसे तमाशे में बदल दिया है, जिसके अंत नतीजे को लेकर अभी से संदेह होने लगा है। ऐसा नहीं है कि अमेरिकी चुनाव में पहले विवाद नहीं हुए हैं। इस सदी की शुरुआत ही सन् 2000 के विवादित चुनाव से हुई थी जब डेमोक्रेटिक पार्टी के उम्मीदवार अल गोर ने रिपब्लिकन उम्मीदवार जॉर्ज बुश को जीत की बधाई दी थी लेकिन बाद में फ्लोरिडा स्टेट का चुनाव अटक गया और अल गोर ने अपनी बधाई वापस ले ली थी। गोर पॉपुलर वोट में जीत गए थे परंतु इलेक्टोरल कॉलेज के वोट में वे हार गए। इसमें जॉर्ज बुश के भाई और फ्लोरिडा के उस समय के गवर्नर जेब बुश की धांधलियों का बड़ा हाथ रहा। बहरहाल, वह मामला सुप्रीम कोर्ट में जाकर निपटा।

उससे पहले भी अमेरिकी चुनाव में विवाद हुए थे, परंतु चुनाव प्रचार के दौरान ही ऐसी बातें पहले कभी नहीं हुई थीं, जिनसे नतीजों को लेकर संदेह पैदा हो जाए। इस बार ऐसा लग रहा है कि चुनाव तो ऐतिहासिक विवाद वाला होगा ही, इसके नतीजे भी विवादित होंगे और इस वजह से दुनिया के सबसे जीवंत लोकतंत्र वाले इस देश में सत्ता हस्तांतरण भी आसानी से नहीं होने वाला है। राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने **अमेरिकी चुनाव** से जुड़ी हर हस्ती और हर संस्था की साख पर हमला किया है, उसकी निष्पक्षता पर सवाल उठाया है, उसकी योग्यता व क्षमता को कठघरे में खड़ा किया है, मतदाताओं के विवेक को चुनौती दी है और मतदान प्रक्रिया को अपने कार्यकारी आदेश से प्रभावित करने का प्रयास किया है।

पिछले चुनाव में यह बात सामने आई थी कि रूस ने अमेरिकी चुनाव को प्रभावित किया है। चुनाव के बाद इस पर कई किस्म की जांच हुई और यह साबित भी हुआ कि तकनीक और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का इस्तेमाल करके मतदाताओं की मानसिकता को खास तरीके से प्रभावित किया गया। इस बार चुनाव से पहले ही राष्ट्रपति ट्रंप और उनके प्रशासन से जुड़े उच्च अधिकारी इस किस्म की बातें करने लगे हैं। बुश प्रशासन के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ने कहा है कि चीन ने चुनाव को प्रभावित करने की बड़ी तैयारी की है। उन्होंने इशारों में रूस और ईरान को भी इसमें शामिल बताया है।

सोचें, दुनिया की एकमात्र महाशक्ति देश का राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार इस किस्म की बातें कर रहा है। इन बातों का इसके सिवाय और कोई मकसद नहीं है कि चुनाव नतीजों को पहले से विवादित बनाया जाए। इस किस्म के प्रचार से ट्रंप और उनके सहयोगी अभी से अमेरिकी नागरिकों के मन में यह संदेह पैदा कर रहे हैं कि दुनिया की दूसरी ताकतें खासकर चीन और रूस चुनाव नतीजों को प्रभावित करने की कोशिश कर रहे हैं। इसी बात को स्थापित करने के लिए ट्रंप बार-बार डेमोक्रेटिक पार्टी के उम्मीदवार जो बाइडेन को चीन का आदमी बता रहे हैं।

अमेरिका में कोरोना वायरस के संक्रमण ने ट्रंप को यह मौका दिया है कि वे चुनाव की पूरी प्रक्रिया को विवादित बना दें। कोरोना संक्रमण की वजह से इस बार वोटिंग के लिए पोलिंग बूथ कम बनने की संभावना है। ध्यान रहे अमेरिका में भारत की तरह चुनाव आयोग हर नागरिक के लिए बूथ बनवाकर, सरकारी कर्मचारियों की ड्यूटी लगाकर उनसे वोट नहीं डलवाता है। वहां लोग वालंटियर करते हैं। मतदान केंद्रों पर आम लोग स्वेच्छा से जाकर काम करते हैं और लोग वहां वोट डालते हैं। इस बार कोरोना के कारण कम लोग वालंटियर कर रहे हैं, उनको संक्रमित होने का डर है तो दूसरी ओर बड़ी संख्या में ऐसे लोग हैं, जिनको लग रहा है कि कम मतदान केंद्र होने से लंबी लाइन लगेगी और वहां जाकर वोट डालना मतलब कोरोना को न्यौता देना है। इस वजह से ज्यादा से ज्यादा लोग मेल इन बैलेट यानी पोस्टल बैलेट से वोटिंग के विकल्प को चुन रहे हैं।

इस वजह से अमेरिका में एक नया संकट खड़ा हुआ है। ज्यादा पोस्टल बैलेट हैंडल करने के लिए पोस्टल विभाग को अतिरिक्त भरती करने की जरूरत थी। साथ ही बुनियादी संरचना पर भी खर्च करना था, लेकिन ट्रंप ने अतिरिक्त धन देने से मना कर दिया। अमेरिकी पोस्टल सेवा की इमरजेंसी जरूरतों के लिए 25 अरब डॉलर देना था या राज्यों को चुनावी काम की जरूरतों के लिए **साढ़े तीन अरब डॉलर** देने थे। कोरोना राहत पैकेज में ही इसे शामिल करना था और डेमोक्रेटिक पार्टी ने इसके लिए पर्याप्त दबाव भी बनाया परंतु ट्रंप ने पैसे नहीं दिए। इसका नतीजा यह हुआ है कि बड़ी संख्या में लोगों के पोस्टल बैलेट को इकट्ठा करना और गिनती के लिए समय पर पहुंचा पाना मुश्किल हो गया है। कई जगहों पर चुनाव की तारीख से दो दिन पहले तक मेल इन वोटिंग की इजाजत है। इसकी वजह से बहुत से पोस्टल वोट समय से गिनती के लिए नहीं पहुंच पाएंगे और अवैध हो जाएंगे। पिछली बार इसी वजह से 6 लाख वोट अवैध हो गए थे, जो गिने जाते तो नतीजे अलग हो सकते थे। जो पोस्टल बैलेट पहुंच जाएंगे, उनकी गिनती में बहुत समय लगेगा।

● **कुमार विनोद**

ट्रंप को सता रही हार की चिंता

चुनाव हारने की चिंता में ट्रंप बार-बार कह रहे हैं कि मतदान डिसरप्ट हो सकता है, यानी मतदान में गड़बड़ी हो सकती है। जैसे-जैसे देश का मूड उनके खिलाफ हो रहा है और सर्वेक्षणों में वे पिछड़ रहे हैं वैसे-वैसे इस बात का अंदेशा बढ़ता जा रहा है कि वे अपने समर्थन वाले राज्यों में खासकर फ्लोरिडा आदि में जान बूझकर गड़बड़ी करा सकते हैं ताकि चुनाव प्रक्रिया बाधित हो और लोगों का अविश्वास बढ़े। ट्रंप प्रशासन के पोस्टमास्टर जनरल लुईस डिजॉय को लेकर भी संदेह जताया जा रहा है। माना जा रहा है कि वे पोस्टल बैलेट की वोटिंग प्रक्रिया को सफल नहीं होने देना चाहते। सो, लोगों से अपने आसपास के पोस्ट बॉक्स की निगरानी के लिए भी कहा जा रहा है। अमेरिकी बुद्धिजीवी और सामाजिक कार्यकर्ता लोगों से अपील कर रहे हैं कि मतदान प्रक्रिया में ज्यादा से ज्यादा लोग वालंटियर करें, मतदान केंद्र बनाने में मदद करें, उसे डिसइंफेक्ट करने में मदद करें, लोगों को भरोसा दिलाएं कि मतदान केंद्र पर जाकर मतदान करना सुरक्षित है। लोगों से अपील की जा रही है कि वे किसी भी हाल में मतदान केंद्रों पर पहुंचकर वोट करें। अमेरिका के लोग इस बात को लेकर चिंतित हैं कि सदियों के संघर्ष से जो अमेरिका बना है, ट्रंप उसे खत्म कर रहे हैं।

फाइलों में 'कैद' हैं महिलाओं की 'चीखें'

महिला हिंसा के खिलाफ एक बार फिर देश की जनता में सरकारी तंत्र के खिलाफ जबर्दस्त आक्रोश है। दुष्कर्म की घटनाओं के विरोध एवं दुष्कर्मियों को तत्काल फांसी की सजा देने की मांग को लेकर महिलाएं सड़क पर हैं। इस बीच यह तथ्य सामने आया है कि मप्र में महिलाओं अधिकारों का हनन रोकने एवं पीड़िताओं को न्याय दिलाने लिए गठित संवैधानिक संस्थाएं खुद ही पीड़ित हैं। मप्र में महिला आयोग सिर्फ नाम का है, आयोग की सरकारी तंत्र में कहीं सुनवाई नहीं हो रही है। पुलिस मुख्यालय की महिला विंग बेहद कमजोर है। हर थाने में महिला डेस्क की व्यवस्था सिर्फ कागजों में है। थाने से लेकर, कोर्ट-कचहरी महिला आयोग तक महिलाओं की चीखें फाइलों में कैद हैं। महिलाओं से दुष्कर्म की घटनाओं के मामलों में मप्र देश में सबसे आगे है। दुष्कर्मियों को फांसी की सजा देने का कानून भी मप्र में सबसे पहले बना था। लेकिन अभी तक एक भी दुष्कर्मी को मप्र में फांसी पर नहीं लटकाया गया है। सरकार **किसी भी दल की हो,** विपक्ष हमेशा महिला अपराधों पर सिर्फ सियासत तक सीमित रहा है। सरकार कोई ठोस कार्रवाई करने की बजाय सिर्फ तर्कों से विपक्ष के आरोपों का जवाब तक सीमित रहती है। यही वजह है कि प्रदेश में महिला अपराधों पर अंकुश नहीं लग रहा है।

प्रदेश में महिला आयोग में अध्यक्ष, सदस्य नियुक्त हैं, लेकिन महिला अपराध से जुड़ी अनुशंसाओं की सरकारी तंत्र में सुनवाई कहीं नहीं हो रही है। पिछली सरकार ने आखिरी दिनों में राज्य महिला आयोग में अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति की थी। भाजपा सरकार ने आते ही कांग्रेस सरकार द्वारा आनन-फानन में की गईं आयोगों की सभी नियुक्तियों को रद्द कर दिया था। युवा, पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक एवं महिला आयोग के पदाधिकारी सरकार के इस फैसले के खिलाफ हाईकोर्ट में न्याय के लिए गए हैं। हाईकोर्ट की रोक की वजह से ही इन आयोगों में पदाधिकारी तैनात हैं। खास बात यह है कि महिला आयोग न तो बैंच लगा पा रहा है। इस वजह से न तो अधिकारी पेशी पर जा रहे हैं और न ही महिला अपराध से जुड़े मामलों की सुनवाई हो रही है। पुलिस मुख्यालय में भी महिला अपराधों को डील करने के लिए अलग से महिला विंग है। इसकी मुखिया भी आमतौर पर महिला अधिकारी होती है। लेकिन पीएचक्यू की यह विंग भी बेहद कमजोर है। महिला से जुड़े अपराधों को लेकर पीएचक्यू भी सिर्फ खानापूर्ति तक सीमित है। महिला अपराध हर जिले में हो रहे हैं, ऐसे अपराधों में पुलिस की लापरवाही भी सामने आती हैं, लेकिन पीएचक्यू कोई कसावट नहीं कर पा रहा है। दिसंबर 2012 में दिल्ली के निर्भया कांड के बाद मप्र में महिला अपराधों में कमी लाने और पीड़ितों को न्याय दिलाने के लिए पीएचक्यू की महिला विंग को ताकतवर बनाने की कोशिश की गई थी। अब तो महिलाओं की शिकायत तक नहीं सुनी जाती हैं। जिलों में महिला थानों की स्थिति सुधरने की बजाय कमजोर होती चली गई है।

पुलिस महकमे में भी महिला प्रताड़ना की घटनाएं सामने आती रहती हैं। शिकायतों के बाद भी महिला पुलिस कर्मचारी एवं अधिकारियों की सुनवाई नहीं होती है। पुलिस महकमे में महिला पुलिसकर्मियों से जुड़े ऐसे दो दर्जन से ज्यादा केस हैं, जो फाइलों में कैद हैं। महिला अपराधों को लेकर प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान बेहद संवेदनशील हैं। पुलिस मुख्यालय की मनाही के बाद भी उन्होंने पुलिस भर्ती में महिलाओं को 33 फीसदी आरक्षण दिलाया था। महिलाओं ने पुलिस भर्ती में आरक्षण का लाभ लिया, लेकिन नौकरी में भर्ती होने के बाद ज्यादातर महिला पुलिस कर्मचारी एवं अधिकारी पुलिस थानों में पदस्थ होने की बजाय एसपी कार्यालय, आईजी कार्यालय, पुलिस मुख्यालय समेत पुलिस के अन्य कार्यालय में पदस्थ हैं। जबकि सरकार ने हर थाने में महिला पुलिस कर्मचारी की पदस्थापना की मंशा से पुलिस में महिलाओं का आरक्षण 33 फीसदी किया था।

सांस्कृतिक क्षरण की रही-सही कसर इंटरनेट और सोशल मीडिया ने पूरी कर दी है। ऑनलाइन अश्लीलता अपरिपक्व मन को दूषित कर रही है। यह अनायास नहीं कि दुष्कर्म की शिकार सिर्फ युवा स्त्रियां ही नहीं, बल्कि वृद्धा और अबोध बालिकाएं भी हो रही हैं। इन घटनाओं पर रोक लगाने में कानून और पुलिस-प्रशासन की भूमिका की एक सीमा है। पुलिस का रवैया भी प्राय: असंवेदनशील रहता है। न्याय प्रक्रिया ढुलमुल ही है। निर्भया कांड के बाद बने कड़े कानून भी कारगर साबित नहीं हुए। अमेरिका, कनाडा, स्वीडन और ब्रिटेन जैसे विकसित देशों में भी दुष्कर्म की तमाम घटनाएं होती हैं, जबकि इन देशों में पुलिस अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील, कानून अत्यंत सख्त और न्याय प्रक्रिया त्वरित है। एक रिपोर्ट के अनुसार अमेरिका में 12 से 16 साल की 83 फीसदी लड़कियों का किसी न किसी रूप में यौन उत्पीड़न हुआ है।

● **ज्योत्सना अनूप यादव**

संस्कारों की है बड़ी भूमिका

दुष्कर्म की घटनाओं को रोकने में सबसे जरूरी है लोगों की मानसिकता में परिवर्तन और इसमें मूल्यपरक शिक्षा के साथ-साथ नई पीढ़ी को परिवार एवं समाज के स्तर पर दिए जाने वाले संस्कारों की भी बड़ी भूमिका है। इसके लिए हमें शैक्षणिक और शिक्षणेत्तर पाठ्यक्रम में विशेष ध्यान देना होगा और सिविल सोसायटी को बेहतर समाज बनाने की चिंता करनी होगी। पश्चिमी प्रभाव में आकर चारित्रिक मूल्य निर्माण को हमारे शैक्षणिक पाठ्यक्रमों में हाशिए पर रख दिया गया है। स्कूली छात्रों के प्रोजेक्ट के विषय इस तरह से निर्धारित किए जाने चाहिए, जो नारी के प्रति संवेदनशीलता और उच्च भावों को भरने वाले हों। इसका ध्यान विभिन्न शिक्षणेत्तर क्रियाकलापों के संदर्भ में भी रखा जाए। आजकल एनसीईआरटी नई 'राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा' पर विचार भी कर रही है। ऐसे में उससे अपेक्षा है कि पाठ्यचर्या और पाठ्य पुस्तकों के निर्माण में इन बिंदुओं को भी समाहित किया जाएगा। यह भी स्पष्ट है कि सारी जिम्मेदारी शिक्षा संस्थानों पर नहीं डाली जा सकती। शिक्षा संस्थानों के साथ-साथ समाज को भी अपनी जिम्मेदारी निभानी होगी।

PRISM®
CEMENT

प्रिज़्म® चैम्पियन प्लस

ज़िम्मेदारी मज़बूत और टिकाऊ निर्माण की.

Toll free: 1800-3000-1444
Email: cement.customerservice@prismjohnson.in

दूर की सोच®

घर एक मंदिर है

ट्रिन-ट्रिन... फोन की घंटी बजती है।

'हैलो' अरे! बहुत देर से फोन कर रही थी। कहां थी? कैसी है? काफी दिनों से फोन नहीं आया? क्या कारण है? सीमा लगातार बोलती जा रही थी...

झाड़ू लगा रही थी। रीमा ठंडी सांस भरते हुए...

बाई नहीं लगाई? भई देखो! हमने तो लगा ली हमसे तो यह सब होता नहीं है। फिर बात यह भी है कि लोग हमारे स्टेटस के बारे में क्या सोचेंगे?

मतलब! तुम कहना चाहती हो कि स्टेटस अपने लोगों की जान से बड़ा है और हमारा नहीं है?

नहीं रे! मेरा यह मतलब कदापि नहीं है। समय भी नहीं बचता, मम्मी जी मंदिर की कार्यकारिणी की सदस्या जो ठहरीं। वहां की साफ-सफाई तो हम ही करते हैं और अब तो वैसे भी सफाई का ज्यादा ध्यान रखना पड़ता है।

बस! यही तो बात है जो मैंने अभी तक बाई नहीं लगाई। अब सफाई का ज्यादा ध्यान रखना है क्योंकि यह घर ही 'हमारा मंदिर है' और हम सब इसके पुजारी, फिर किसी और से इसकी सफाई क्यों? खुद क्यों नहीं?

दूसरी तरफ से आवाज आनी बंद हो जाती है और रीमा खुशी-खुशी फिर अपने मंदिर को सजाने में लग जाती है।

- नूतन गर्ग (दिल्ली)

द्रुपदसुताओं अस्त्र गहो

सत्तासीन नैन खो दे तो,
दु:शासन बौराएंगे।
द्रुपदसुताओ अस्त्र गहो ,
अब केशव फिर न आएंगे।
गर नर दनुज सरीखा हो तो,
ममतामयी रूप छोड़ो।
बुरी नजर गर देखे कोई ,
बाज बनो, आंखे फोड़ो।
कब तक दानव जैसे मानव,
तुमको जिंदा खाएंगे ?
द्रुपदसुताओं अस्त्र गहो...
यह सोता समाज उठ बैठे,
तुम ऐसी हुंकार करो।
बहुत हुआ अब रणचंडी बन,
रक्त पियो, संहार करो।
नहीं, दनुज हर ओर पाप के,
यह किस्से दुहराएंगे।
द्रुपदसुताओं अस्त्र गहो...
कब तक चीरहरण होगा,
तुम हर दिन मारी जाओगी?
नहीं बनी गर रणचंडी,
चोपड़ में हारी जाओगी ।
कब तक नर अपनी तृष्णा में,
तुमको दांव लगाएंगे?
द्रुपदसुताओं अस्त्र गहो...
गर मृगनयनी बनी रही तुम,
हिंसक पशु खा जाएंगे।
बनी सुकोमल पुष्प सरिस,
तो छलिया भौरें आएंगे।
बनो हुतासन सरिस सभी,
निशचर निश्चय जल जाएंगे।
द्रुपदसुताओं अस्त्र गहो...

- डॉ. दिवाकर दत्त त्रिपाठी

मायूसी

करीब तीन साल पहले की बात है। मेरे एक करीबी मित्र की पत्नी ने अस्पताल में बेटी को जन्म दिया। आज के समय में पढ़े लिखे लोगों में भी बेटी के जन्म को निहायत ही गिरी नजरों से देखा जाता है, ये उस दिन पहली बार साक्षात देखा।

मेरे लिए यकीन करना कठिन हो रहा था कि मेरे मित्र महोदय के चेहरे के ऐसे भाव थे जैसे बेटी ने जन्म नहीं लिया, बल्कि किसी की मौत हो गई हो। उनके लिए कुछ बोल पाना भी कठिन हो रहा था।

अफसोस तो इस बात का हो रहा था उनके मम्मी-पापा भी शोकग्रस्त ही दिखे। कुंठा के कारण उन लोगों ने अपने किसी रिश्तेदार को बेटी के जन्म की सूचना तक नहीं दी। जबकि वो उनकी पहली संतान थी।

थोड़ी देर अस्पताल में रुकने के बाद मैं आज के इस सभ्य समाज की मानसिकता को समझने की कोशिश करता हुआ वापस घर लौट आया।

- सुधीर श्रीवास्तव

आईपीएल में यंग ब्रिगेड का जलवा

टीम इंडिया की जर्सी पहनने का सपना हर युवा क्रिकेटर का होता है। आईपीएल युवा क्रिकेटरों के इस सपने को साकार करने की नई राह बन गया है। आमतौर पर युवा खिलाड़ी अंडर-19 विश्वकप और घरेलू क्रिकेट में अच्छा प्रदर्शन करके आईपीएल फ्रेंचाइजियों को अपनी तरफ आकर्षित करते हैं। इसमें खेलने पर उन्हें अंतरराष्ट्रीय स्तर की बल्लेबाजी और गेंदबाजी का सामना करना पड़ता है। इस माहौल में निखरने वाली युवा प्रतिभाएं सीनियर चयनकर्ताओं की निगाह में आ जाती हैं। यह सही है कि इन प्रतिभाओं के लिए अनुभवी खिलाड़ियों के सामने लगातार शानदार प्रदर्शन करना आसान नहीं होता, पर एक-दो मैचों में टीम की जीत में अहम भूमिका निभा देने पर भी वे पारखियों की निगाह में चढ़ जाते हैं। आईपीएल के मौजूदा सत्र में अब तक रॉयल चैलेंजर्स बेंगलुरू के बल्लेबाज देवदत्त पडिक्कल, सनराइजर्स हैदराबाद के बल्लेबाज प्रियम गर्ग, केकेआर के पेस गेंदबाज कमलेश नागरकोटी, राजस्थान रॉयल्स के पेस गेंदबाज कार्तिक त्यागी और किंग्स इलेवन पंजाब के लेग स्पिन गेंदबाज रवि बिश्नोई ने अपने प्रदर्शन से उम्मीदें जगाई हैं।

यह सही है कि आईपीएल के एक सत्र में शानदार प्रदर्शन किसी भी क्रिकेटर को राष्ट्रीय टीम में नहीं पहुंचा देता, लेकिन सुर्खियां पाकर वह उस राह पर थोड़ा आगे जरूर बढ़ जाता है। इस टी-20 लीग में खेलने का सबसे बड़ा फायदा होता है नामी कोचों की सलाह और अंतरराष्ट्रीय खिलाड़ियों से टिप्स मिलना। अब आप रॉयल चैलेंजर्स बेंगलुरू के देवदत्त पडिक्कल को लें। वह घरेलू सत्र में शानदार प्रदर्शन करके आए थे। लेकिन अभी विराट कोहली और एबी डिविलियर्स के साथ अभ्यास करके वह एक अलग दर्जे के खिलाड़ी नजर आने लगे हैं। अब तक खेले गए अपने पांच मैचों में तीन अर्धशतकों के साथ 178 रन बनाकर उन्होंने सभी को प्रभावित किया है। सनराइजर्स हैदराबाद के प्रियम गर्ग को पांच मैचों में से तीन में ही बल्लेबाजी करने का मौका मिला है और उनके नाम सिर्फ 71 रन दर्ज हैं लेकिन उन्होंने चेन्नई सुपरकिंग्स के खिलाफ दमखम दिखाकर टीम को जीत दिलाने में अहम भूमिका निभाई। इस प्रदर्शन ने उन्हें एक ही दिन में हीरो बना दिया।

इसी तरह राजस्थान रॉयल्स के पेस गेंदबाज कार्तिक त्यागी और केकेआर के पेस गेंदबाज कमलेश नागरकोटी ने अपनी रफ्तार और गेंद पर नियंत्रण से यह उम्मीद बंधाई है कि टीम इंडिया का आने वाला कल उनके हाथों में सुरक्षित है। कार्तिक के बारे में इरफान पठान कहते हैं कि उनका रनअप एकदम ब्रेट ली की तरह है पर वह जब गेंद फेंकने के समय अपना पैर जमीन पर पटकते हैं तो पंजा बाहर की तरफ निकलता है। वह यदि इसे सीधा रखने का प्रयास करें तो और भी बेहतर गेंदबाज बन सकते हैं। हम किंग्स इलेवन पंजाब के लेग स्पिनर रवि बिश्नोई की बात करें तो उन्होंने इस साल के शुरू में अंडर-19 विश्वकप में भारतीय चुनौती को फाइनल तक ले जाने में अहम भूमिका निभाई थी। इस गेंदबाज को जबसे कोच के रूप में महान गेंदबाज अनिल कुंबले का निर्देशन मिला है तब से उनका एक अलग ही क्लास दिखने लगा है। शुरुआती मैचों में वह बल्लेबाजों को थामने में सफल रहे पर विकेटों के मामले में सफलता उनसे रूठी रही। बाद में आरसीबी के खिलाफ 32 रन पर तीन और दिल्ली कैपिटल्स के खिलाफ 22 रन पर एक विकेट निकालकर उन्होंने जता दिया कि वह टीम इंडिया की जिम्मेदारियों को उठाने के लिए तैयार हैं।

आईपीएल बेशक युवा प्रतिभाओं को मंच प्रदान करता है लेकिन मौकों को लपकना खुद खिलाड़ी पर निर्भर करता है। इस साल के शुरू में हुए अंडर-19 विश्वकप के समय कप्तान प्रियम गर्ग से ज्यादा चर्चा में रहने वाले यशस्वी जायसवाल को असाधारण प्रतिभा वाला खिलाड़ी माना जाता है। इस बल्लेबाज की सचिन तेंदुलकर तक प्रशंसा कर चुके हैं। लेकिन अन्य युवा प्रतिभाओं की तरह वह मौकों को लपक नहीं पाए हैं। राजस्थान रॉयल्स में शामिल इस खिलाड़ी को कप्तान स्टीव स्मिथ ने दो बार पारी की शुरुआत करने के लिए उतारा लेकिन वह दोनों बार असफल साबित हुए। यह असफलता उन्हें पूरे सत्र में बाहर बैठने के लिए भी मजबूर कर सकती है। असल में इस लीग में भाग लेने वाली सभी टीमों का अंदाज एकदम प्रफेशनल रहता है। इसलिए सही तालमेल बन जाने पर उसे तोड़ने की गुंजाइश कम ही होती है। अभी जोस बटलर और कप्तान स्टीव स्मिथ पारी की शुरुआत कर रहे हैं। आगे इस जोड़ी की असफलता ही यशस्वी का भाग्य बदल सकती है। सुनील गावस्कर कहते हैं कि आईपीएल में प्रदर्शन को देखने के बाद लगता है कि जूनियर क्रिकेटरों को तैयार करने के मामले में कोई भी बीसीसीआई की बराबरी नहीं कर सकता है। इसकी वजह वह देश के आयु वर्ग क्रिकेट और अंडर-21 टीमों को लगातार दौरों पर भेजने की योजना और इसके ढांचे को मानते हैं। इसके अलावा इन खिलाड़ियों को तैयार करने में राहुल द्रविड़ की भूमिका भी अहम है। वह एनसीए में युवा प्रतिभाओं को तराशने के काम में समर्पित भाव से जुटे हुए हैं।

इन युवा प्रतिभाओं को यह ध्यान में रखने की जरूरत है कि आईपीएल में शानदार प्रदर्शन करने से उनमें दिग्गज खिलाड़ियों के आगे अच्छा प्रदर्शन करने का जज्बा आता है और यह सिर्फ राष्ट्रीय टीम की तरफ बढ़ने की राह भर बनाता है। अब आप 2018 के अंडर-19 विश्वकप को जीतने वाली भारतीय टीम के कप्तान पृथ्वी शॉ और शुभमन गिल को ही ले लें। इन दोनों ने ही भारत को चैंपियन बनाने में अहम योगदान किया था। पर पृथ्वी शॉ तत्काल भारतीय टीम में जगह पा गए थे लेकिन शुभमन गिल टीम में स्थान पक्का करने के लिए अभी जूझ ही रहे हैं। इन युवा प्रतिभाओं में से कितने खिलाड़ी टीम इंडिया में स्थान पा सकेंगे, यह कहना मुश्किल है, लेकिन इतना जरूर है कि टीम की दूसरी पंक्ति पूरी तरह से तैयार है। मामले का दूसरा पक्ष यह भी है कि दूसरी पंक्ति में प्रतिभाओं की भरमार रहने पर टीम में शामिल खिलाड़ियों पर बेहतर प्रदर्शन का दबाव बना रहता है।

● आशीष नेमा

बॉलीवुड के महानायक अमिताभ बच्चन सोशल मीडिया पर काफी एक्टिव रहते हैं। इन दिनों वह टीवी के सबसे चर्चित क्विज शो 'कौन बनेगा करोड़पति 12' में दिखाई दे रहे हैं। गत दिनों पहले राजस्थान के जोधपुर से आईं 20 साल की कोमल टुकडिया हॉट सीट बैठी थीं। कोमल ने 12,50,000 रुपए की धनराशि जीती। शो के दौरान अमिताभ बच्चन ने एक मजेदार किस्सा अपने जन्म से पहले पड़े नाम इंकलाब को लेकर सुनाया। शो में उन्हें इस किस्से की याद एक सवाल के बाद अचानक आ गई।

जन्म से पहले बिग बी का नाम पड़ गया था 'इंकलाब'

बिग बी ने बताया कि उस समय उनकी मां तेजी बच्चन 8 महीने की गर्भवती थीं और उनका जन्म होने वाला था। इस दौरान जब तेजी बच्चन ने देखा कि इंकलाब जिंदाबाद के नारे लगाता एक जुलूस निकल रहा है तो तेजी भी घर से बाहर निकल गईं और नारे लगाते हुए भीड़ के साथ आगे बढ़ गईं। उन्होंने आगे कहा कि पिता हरिवंश राय बच्चन जब घर पर आए और पत्नी तेजी बच्चन को न पाकर घबरा गए कि ऐसी हालत में वे कहां चली गईं। जब वापस आकर तेजी ने बताया कि वे भीड़ के साथ आंदोलन का हिस्सा बनने गई थीं। उस समय हरिवंश राय बच्चन अपने किसी दोस्त के साथ थे। उनके दोस्त ने ये सुनते ही हंसते हुए कहा कि तेजी जी के पेट में जो बच्चा है अगर वो लड़का हुआ तो उनका नाम इंकलाब रख देना चाहिए। हालांकि, अमिताभ ने बाद में बताया कि उनका नाम अमिताभ महान साहित्यकार और उनके पिता हरिवंश राय बच्चन के दोस्त सुमित्रानंदन पंत ने रखा था।

रियल लाइफ में भौकाली नहीं है 'कालीन भैया'

2004 में फिल्म रन में अनाम किरदार से अपनी अभिनय यात्रा की शुरुआत करने वाले एक्टर पंकज त्रिपाठी की सफलता का रास्ता 'कई विफलताओं' से होकर गुजरा है। हालांकि आज जब त्रिपाठी पीछे मुड़कर देखते हैं तो उन्हें अपनी उन असफलताओं का कोई मलाल नहीं है।

पिछले कुछ वर्षों में पंकज त्रिपाठी ने 'गैंग्स ऑफ वासेपुर', 'गुड़गांव', 'मिर्जापुर', 'सेक्रेड गेम्स', 'मसान', 'न्यूटन', 'बरेली की बर्फी', 'गुंजन सक्सेना: द करगिल गर्ल' जैसी फिल्मों और वेब सीरीज में अहम और चुनौतीपूर्ण रोल किए हैं। त्रिपाठी ने कहा कि आज वे जिस मुकाम पर खड़े हैं, उसका श्रेय शुरुआती संघर्षों को जाता है। त्रिपाठी ने एक इंटरव्यू में कहा कि, 'वे मेरे शुरुआती दिन थे। मैं आज जो कुछ भी हूं, उन पुरानी गलतियों और उस समय जो मैंने अच्छी चीजें की थी, उसकी देन है। मेरे जेहन में बाबा नागार्जुन की कविता- जो न हो सके पूर्ण काम, उनका करता हूं मैं प्रणाम' की कविता चलती थी।'

सारी विफलताएं ठीक थीं

पंकज त्रिपाठी ने कहा, 'हमारा जो अतीत होता है, वह हमेशा ठीक ही होता है। मेरा मानना है कि जो कुछ भी होता है, अच्छे के लिए होता है। इसलिए वह सारी विफलताएं ठीक ही थीं।' आशावाद का यह दर्शन त्रिपाठी के हर काम में झलकता है, चाहे वह 'मिर्जापुर' वेब सीरीज में कालीन भैया नाम के खलनायक का किरदार ही क्यों न हो। अमेजन प्राइम पर प्रसारित मिर्जापुर में उन्होंने कालीन भैया नाम के खलनायक का किरदार अदा किया है। पंकज ने कहा, 'मैं ऐसा व्यक्ति हूं जो चीजों को ठहराव के साथ करना पसंद करता है और इसलिए मैं कालीन भैया के किरदार में 'ठहराव' लाया। वह नकारात्मक है। मैं अपने किरदार इस उम्मीद के साथ निभाता हूं कि कहीं वे अच्छे होंगे या बेहतरी के लिए खुद को बदल सकते हैं। इसलिए मैं अपने सभी किरदारों में कुछ मानवीय पुट और उम्मीद भरता हूं।

जब हजार लोगों के बीच फंस गए थे अजय देवगन, 250 फाइटर्स के साथ पहुंच गए थे वीरू देवगन

बॉलीवुड के दिग्गज अभिनेता अजय देवगन के पिता वीरू देवगन हिंदी फिल्मों के एक जाने माने फिल्म निर्देशक थे, जो एक्शन से भरपूर फिल्में बनाने में माहिर थे। इन दिनों अजय देवगन का एक वीडियो सोशल मीडिया पर काफी तेजी से वायरल हो रहा है, जो टीवी शो यारों की बारात के एक एपिसोड का क्लिप है, जिसमें अभिषेक बच्चन और संजय दत्त के अलावा शो के होस्ट साजिद खान और रितेश देशमुख भी नजर आ रहे हैं। अजय बताते हैं कि एक बार तो उन्हें 25 लोगों ने मिलकर मारा था। उसके बाद इस घटना की पूरी कहानी साजिद खान आगे सुनाते हैं, क्योंकि इस घटना के दौरान साजिद भी अजय के साथ ही थे। साजिद बताते हैं कि एक बार अजय की व्हाइट जीप थी, जिसमें वे सब घूमते थे। एक बार हॉलीडे होटल के पास पतली सी गली थी, जहां से अचानक पतंग के पीछे भागते हुए एक बच्चा पता नहीं कहां से आ गया। इस दौरान जीप फुल स्पीड में थी, लेकिन सही समय पर ब्रेक लगने से बच्चे को कुछ नहीं हुआ, उसे चोट भी नहीं आई, लेकिन बच्चा डर गया था, इसलिए वो रोने लगा। इसके बाद धीरे-धीरे वहां लोग इकट्ठे होने लगे और देखते ही देखते हजार लोगों ने अजय और साजिद को घेर लिया। तभी इस बात का पता वीरू देवगन को चला और वह 250 फाइटर्स के साथ उस जगह पहुंच गए। साजिद बताते हैं कि जैसे फिल्मों में होता है, ठीक वैसा ही सीन देखने को मिल रहा था। बेटे को बचाने के लिए पिता मौके पर आता और कहता है कि कौन है जिसने मेरे बेटे को हाथ लगाया।

ऑनलाइन शिक्षा

कोरोना महामारी के चलते आम जनता के जीवन में तूफान आया हुआ है ताली पीटकर, थाली पीटकर और फिर टोटल लॉकडाउन करने की कोशिशों के बाद भी यह (कोरोना) ना पलटा बल्कि देश की जनसंख्या की तरह आगे ही बढ़ता जा रहा है। इधर कोरोना बढ़ा, उधर आर्थिक समस्याएं और दोनों की जंग में लॉकडाउन हार गया और शुरू हुआ अनलॉक का दौर!

खैर! शुरू हुआ अनलॉक एक, फिर अनलॉक दो के बाद 'बौराई' सरकार और 'स्कूल फीस से वंचित' स्कूल प्रशासन को याद आया कि बच्चों की शिक्षा का, भी तो भयानक नुकसान हो रहा है। इसीलिए ऑनलाइन क्लासेज शुरू की जाए ताकि बच्चों का भविष्य सुरक्षित (कम से कम शिक्षा के कारण) तो हो जाए। कोरोना तो आजाद है वह कुछ भी करें! तो शुरू हुई शिक्षा देने की अति सरल! सुखद! प्रक्रिया! 'ऑनलाइन शिक्षा।'

अभिभावक और आम आदमी जो पहले से ही बौरा रहे थे क्योंकि लॉकडाउन के साथ घर में कैद उस बेचारे के दिमाग का पलीता पहले ही निकल चुका था। एक ओर बीवी के आदेशों से, दूसरी ओर टीवी चैनलों के संदेशों से और तो और 'वर्क फ्रॉम होम' के चलते बॉस की भी घर के सूकून में, बिना इजाजत इंट्री से, बेचारे एक आम से, आदमी के आम से, छोटे से इकलौते टीवी वाले कमरे में, बीवी, बॉस और अपनी असीमित 'ऊर्जा' का प्रर्दशन करते 'मासूम' बच्चे! इनसे उबर भी ना पाया था कि 'ऑनलाइन टीचिंग' के बहाने बच्चों के टीचर भी घर पर पधार गए।

अब जिन 'जिद मनवाऊ' बच्चों और 'अति सजग' तथा 'सदैव आशंका ग्रस्त' माता-पिता व 'भाग्यशाली व स्टेटस वाले' बच्चों के पास 2जी 3जी 4जी मोबाइल थे या स्मार्टफोन थे उन बच्चों का तो टाइम एक के बाद एक लगती कक्षाओं में कंफ्यूज होने लगा। पर जिन बच्चों के पास स्वंय के मोबाइल नहीं थे उनके माता-पिताओं को कुर्बानी देनी पड़ी और अपने 'प्यारे' मोबाइल को अति 'ऊर्जावान' बाल वानरों के सुपुर्द करना पड़ा ज्यादातर कुर्बानी 'ममता की देवी 'और 'कुछ ना करने वाली' घर की कर्ता-धर्ता को ही करनी पड़ी पर कुछ 'स्वतंत्रता प्रेमी' और बाहरी कामकाज भी संभालने वाली 'श्रेष्ठ' नारियों को यह 'मोबाइल दान' और 'करुणा प्रदर्शन' सही नहीं लगा तो मन मारकर अपने सारे 'जरूरी-जरूरी' दस्तावेज मिटा-मिटाकर 'अच्छे और महान' पिताश्री होने का प्रमाण कहीं-कहीं पुरूषों को भी देना पड़ा।

यह तो उन लोगों की बात हुई जिनके घर दो मोबाइल थे। अब बचे बेचारे वे आम से भी ज्यादा आम लोग, जिन्होंने अपने बच्चों को ठीक-ठाक स्कूलों में पढ़ाने का बड़ा ही महंगा और सुखद स्वप्न देखने का साहस किया था उनके घर या तो एक ही स्मार्टफोन था या था एक साधारण सा फोन जो केवल 'सुरक्षित होने की' या 'जरूरी बातों' की सूचनाएं देने या लेने के 'आम' से काम ही आ सकता था!

'मनोरंजन' करने! 'टाइमपास' करने! सेल्फी लेने! और एक्सीडेंट में घायल हुए, मरते हुए इंसान की, वीडियो रिकॉर्डिंग! करने का गुण उसमें नहीं होता है! एक तो कोरोना की आर्थिक मार ऊपर से ऑनलाइन पढ़ाई के लिए स्कूल के प्रशासन और बच्चों का दबाव और साथ ही ऑनलाइन पढ़ाई ना हो पाने के कारण होनहार बच्चों की पढ़ाई का नुकसान होने का दबाव, इस आम आदमी के लिए तो जिंदगी चूसा हुआ आम बन गई। कहां से मोबाइल लाए? ना लाए तो **बच्चों को जेंटलमैन कैसे बनाएं?** इसी उधेड़बुन में कोरोना से बचता-बचाता, सोशल डिस्टेंसिंग बनाता, साबुन से हाथ चमकाता, अपनों से कटा-कटा, यह आम आदमी पहुंच जाता है वहां, जहां किसी परेशानी, किसी उलझन, किसी दुख को जाने की इजाजत नहीं है! सोमरस पीकर वह समस्याओं से उस दिन के लिए पीछा छुड़ा लेता है अगले दिन फिर चिंता करने लगता है।

अब जिनकी इकलौती संतानें थी, उन्होंने तो किसी तरह जुगाड़ बैठाकर, मांग-जांच कर, एक अदद स्मार्टफोन अपने बच्चे को दिलवा दिया परंतु जिनके घर तीन या उससे भी ज्यादा होनहार सुशोभित थे, उनके घर आज भी एक-एक कन्फ्यूजिंग क्लास के लिए आपाधापी मची है क्योंकि पढ़ेगा इंडिया तभी तो बढ़ेगा इंडिया! तो सभी पढ़ना चाहते हैं।

इधर गांवों के सरकारी स्कूलों को भी याद आया कि 'पढ़ाते' तो वह भी हैं! तो 'समझदार' सरकार ने गांव के स्कूलों में भी बच्चों को ऑनलाइन शिक्षा देने का आदेश दमा दम जारी कर दिया। अब बेचारे माता-पिता के पास आटा के लिए पैसे नहीं वो डाटा के लिए पैसे और स्मार्टफोन कहां से लाएं? (किसी-किसी गांव में तो पूरे गांव में केवल एक या दो स्मार्टफोन ही हैं यदि ग्राम प्रधानों के घरों को छोड़ दिया जाए क्योंकि उनके बच्चे तो गांव के सरकारी स्कूलों में पढ़ते नहीं) ! तो बेचारे शिक्षक महोदय, जिनके पास स्मार्टफोन है या नहीं भी है तो खरीदकर या मांगकर शिक्षा का दान भली-भांति कर रहे हैं। गांव के इकलौते स्मार्टफोन को कामकाजी माता-पिता और 'सुपर पढ़ाकू' बच्चों के बीच झूलना पड़ता है। चार-चार टीचर एक ही बच्चे को अपने विषय की किताबों का सारा ज्ञान दान करने का पुण्य लाभ ले लेना चाहते हैं! बेचारे बच्चे और स्मार्टफोन ओवरलोड हो रहे हैं! बहुत सा डाटा उन्हें डिलीट करना पड़ रहा है!

ये ऑनलाइन पढ़ने वाले बच्चे अब जाकर समझे 'संतोषी परम सुखी' क्यों कहा गया! जिनके पास मोबाइल नहीं है, वही परम सुखी हैं।

तो इस तरह इंडिया ऑनलाइन पढ़ रहा है और आगे बढ़ रहा है। सरकार खुश है बच्चों की पढ़ाई नहीं रुक रही। स्कूल प्रशासन खुश है फीस लेने का औचित्य बन गया है, बच्चे नई क्लास और मोबाइल पाकर खुश हैं और आम आदमी और आम अभिभावक चिंता में हैं मोबाइल तो जैसे-तैसे खरीदा पर हर दिन डाटा डलवाने के लिए कहां कतर व्योत करनी पड़ेगी?

● **सुनीता द्विवेदी**

For Any Medical & Pathology Equipments Contact Us

Science House Medicals Pvt.Ltd.

17/1, Sector-1, Shanti Niketan, Near Chetak Bridge, Bhopal (M.P.) INDIA-462023

GST. No. : 23AAPCS9224G1Z5

Email : shbpl@rediffmail.com Fax : +91-0755-4257687

PH. : +91-0755-4241102, 4257687

पर्यावरण की
सुरक्षा का संकल्प
इस संकल्प ने हमारे मन–मानस
में गहरी जड़ पकड़ ली है।
कोल इण्डिया लिमिटेड
विश्व की बृहत्तम कोयला उत्पादक संस्था
A Maharatna Company
प्रकृति के अस्तित्व में ही हमारा अस्तित्व है